स्थला घृतस्थला घृताची विश्वाची पूर्वची प्रम्लोचा और अनुम्लोचन्ती हैं। इन दस अप्सराओं के अलावा एक ग्यारहवीं अप्सरा और भी है वह अप्सरा भगवान नारायण के उस भाग से सब अंगों से निर्दोष और सुन्दर उर्वशी नाम से पैदा हुई। यह अप्सरा स्वर्ग की ग्यारहवीं अप्सरा मानी जाती है। ब्रह्मज्ञानी और प्रसन्नचित्त मेनकी कन्या मेनका थी। ये सभी अप्सराएँ ब्रह्मवादिनी और योगाभ्यास में तत्पर रहने वाली कही जाती हैं उन अप्सराओं के चौदह पवित्रगण प्रसिद्ध हैं आहूत और शोभयन्त उनमें से दो गणों के नाम हैं। आहूतगण की अप्सराएँ ब्रह्माजी की मानस कन्याएँ हैं और शोभयन्त की अप्सराएँ मनु की कन्याएँ हैं। वेगवंत की अप्सराएँ अरिष्टा की कन्याएँ हैं, अग्नि सम्भव नाम के गण ऊर्जा के संयोग से पैदा हुए, आयुष्मती नाम की अप्सराएँ सूर्य की किरणों से पैदा हुईं कल्याण प्रदायनी कुरु नाम की अप्सराएँ चंद्रमा के तेज से पैदा हुईं उस चंद्रमा का तेज मर्भ में आहित हुआ। शुभा नाम की अप्सराएँ यज्ञ से पैदा हुईं ऋक् और साम से अन्य अप्सराएँ पैदा हुईं वे अप्सराएँ बहिन नाम से प्रसिद्ध हुईं और वारिजा नाम की अप्सराएँ अमृत से पैदा हुईं वे अप्सराएँ अमृत नाम से प्रसिद्ध हुईं सुदा नाम की अप्सराएँ वायु से पैदा हुईं। भवा नाम की अप्सराएँ भूमि से पैदा हुईं, रूचा नाम की अप्सराएँ विद्युत से पैदा हुईं भैरवा नाम की अप्सराएँ मृत्यु से पैदा हुईं शोभयंती नाम की अप्सराएँ काम से पैदा हुईं ये सभी अप्सराएँ अप्सराओं के चौदह गण माने जाते हैं। इंद्र विष्णु इत्यादि देवताओं ने इन अप्सराओं में सुंदरता प्रदान की। इन सभी अप्सराओं में परम सुंदरी तिलोत्तमा को सर्व सुंदरी माना गया है।

प्रभावती सुरनारी ब्रह्माजी के अग्निकुण्ड से उत्पन्न हुईं, ये प्रभावती सुरनारी स्वरूप और योवन से भरपूर थीं। वेदवती सुरनारी ब्रह्माजी के वेदीतल से उत्पन्न हुईं, ये वेदवती भी प्रभावती की तरह योवन और स्वरूप से समृद्ध थी। इन दोवों से सुन्दर रूपवाली हेमानाम की सुन्दर सुरनारी यम की कन्या थी, इनके शरीर की कान्ति आग में तपते हुए लोहे के समान थी इनकी आंखें बहुत सुन्दर थीं। इसी प्रकार बहुत सी सुन्दर अप्सराएँ उत्पन्न हुईं। ये अप्सराएँ बहुत से देवों और ऋषियों की माता और पत्नी बनीं। ये सभी अप्सराएँ एक समान चम्पा के फूल की तरह गोरे रंग की और सुगन्धित शरीर वाली थी ये मद्यपान नहीं करती थीं और बिना मद्यपान के ही पति के साथ सहवास करती थीं इनके स्पर्श करने से इनके पति सन्तुष्ट होकर आनन्द विभोर हो जाते हैं। पुराने समय की बात है कि नारद नाम के पर्वत पर प्रजापति ब्रह्माजी का वीर्य स्खलित हो गया, उस वीर्य के स्खलित होने से उस जगह नारद और पर्वत नाम के दो ऋषि उत्पन्न हुए। इन दोनों भाइयों के एक बहिन और थी, जो अरुन्धति नाम से प्रसिद्ध हैं ये अरुन्धति प्रजापति ब्रह्माजी की तीसरी सन्तान मानी जाती है। उसी पर्वत पर सूर्य नारद और पर्वत पर इन सबका जन्म हुआ।

विनता के दो पुत्र हुए, जो अरुण और गरुड़ नाम से प्रसिद्ध हुए। इन दोनों भाइयों की सहोदरा छत्तीस छोटी बहिन भी हैं। गायत्री आदि के छन्द पंखों से उड़ने वाले समस्त पक्षी और सभी विभिन्न दिशाओं में रहने वाले सभी हव्यवाहगण इत्यादि ये सभी विनताके गर्भसे ही उत्पन्न हुए। कद्रू से चलने वाले और न चलने वाले दोनों तरह केसर्प पैदाहुए। अब मैं आपको उन नागोंमें मुख्य नागों के कुछ नाम बताऊँगा। शेष वासुकि, तक्षक, सकर्णी, जम्भ, अंजन, मानव ऐरावत, महापद्म, कम्बल, अश्वतर, ऐलपत्र शंख, ककोटक, धनंजय महाकर्ण, महानील, धृतराष्ट्र, बलाहक, कुमार, पुष्पदन्त, सुमुख, दुर्मुख [illegible] शिखीमुख, दधिमुख, काजोय, शालि-पिराइक, विन्दुपाद,

पुण्डरीक, आपूरण, कपिल, अम्बरीष, धृतपाद, कच्छप, प्रह्लाद, पद्मचित्र, गन्धर्व, मनस्विक नहुष, खररोमा और मणि इत्यादि प्रधान सर्प माने जाते हैं। मैंने आपको कद्रू के पुत्रों का वर्णन सुनाया, अब मैं आपको खशा के पुत्रों के विषय में बताऊँगा।

खशा के दो पुत्र पैदा हुए, वे दोनों पुत्र राक्षस प्रकृति के मनुष्यों के खाने वाले थे। पश्चिम संख्या की तरफ ज्येष्ठ और पूर्व संख्या में मनुष्यों की उत्पत्ति हुई। सबसे पहले खशा ने विलोहित विकर्ण नाम के पुत्र को पैदा किया। वह पुत्र चार हाथों वाला, चार पैरों वाला दो सिर वाला और दो प्रकार से चलने वाला था उसके पूरे शरीर में बाल थे, वह मोटे मोटे शरीर वाला, ऊँची नाक वाला महोदर, स्थूलशीर्ष, महाकर्ण, मूंज की तरह पीले रंग के बालों वाला, मनोरथ मोटे मोटे हाथी के समान होठों वाला, बड़ी बड़ी जांघों वाला, लम्बी दाढ़ी वाला, रक्त जीभ वाला, स्थूलकाय, काले और चितकबरे रंग के कानों वाला तथा बुरा और जोर से शब्द करने वाला महानन्द और महासुख था, इस तरह के अति भयानक पुत्र को खशा ने उत्पन्न किया। इस पुत्र के बाद खशा ने इसके दूसरे भाई को पैदा किया वह खशा का दूसरा पुत्र भी तीन शिर वाला, तीन हाथ वाला, तीन पैर वाला, काली आंखों वाला, हरे रंग की दाढ़ी वाला, छोटे कद का, शिला के समान मजबूत शरीर वाला महाकाय, महावलिष्ठ, कान तक फटे हुए मुख वाला लम्बी भौंहें वाला, स्थूल नाक वाला, मोटे होठ वाला, आठ दाढ़ों वाला, दो जीभ वाला, कील की तरह कान वाला जटाधारी, पीले शरीर वाला महाकर्ण, महाकाय, महान वक्षस्तल, बिना कमर के, कृश उदरयुत बड़े बड़े नाखूनों वाला था, खशा ने ऐसे दूसरे भयानक पुत्र को पैदा किया। ये दोनों पुत्र पैदा होते ही अपने प्रमाण से बहुत अधिक बढ़ गये और फिर शीघ्र ही उपभोग के समर्थ होकर सामने आये। इस तरह इन दोनों पुत्रों ने अपनी माता के पास आकर उनको प्रणाम किया। इन दोनों में जो बड़ा पुत्र था वह

बहुत दुष्ट नीच प्रकृति का था, उसने अपनी माता को ही घसीटना शुरू किया, और अपनी माँ से बोला कि हे माता मैं बहुत भूखा हूँ, मैं तुमको खाऊँगा। तुम मेरे पास आओ।

बड़े भाई का ऐसा बुरा विचार देख छोटा भाई उससे बोला—अरे मूर्ख तू माता को छोड़ दे। और अपनी भुजाओं से पकड़कर उसने अपनी माता को छुड़ा लिया। उसी समय कश्यप जी जो उनके पिता थे वहां आये और उनको लड़ते देखकर बोले—अरे, दुराचारी पुत्रो, रुको ठहरो! पिता को देखकर वे अपनी माया से शीघ्र ही अल्प काम होकर माता की गोद में छिप गये। ऋषि ने अपनी पत्नी से उन पुत्रों की सारी बातें पूछीं। क्योंकि पुत्र मामा के अनुसार होता है और पुत्री पिता के गुण और स्वभाव से युक्त होती है। पृथ्वी के रंग के अनुसार ही जल, जो पृथ्वी पर रहता है, का भी रंग होता है।

अदिति बल, शील आदि श्रेष्ठ गुणों से युक्त और धर्म का आचरण करने वाली हमारी पत्नी है। दिति भी नित्य तपस्या और अध्ययन में लगी रहती है। अरिष्टा गीतों को खूब अच्छी प्रकार से जानती है। दनु को छल तथा मामा को जानकार कहा गया है। विनता को आकाश में उड़ने का शोक है। सुरभि का जीवन अत्यधिक तमोमय है। कद्रू क्रोधिनी है। दनायुषा समयानुसार दया और क्रोध दोनों करती है। ये अनेक प्रकार के स्वभाव मनुष्यों में कर्म, यत्न, बुद्धि, रूप बल और क्षमा आदि के वश से आते हैं। संसार में प्राणियों के स्वभाव सात्विक, राजसी तथा तामसी तीन प्रकार के होते हैं। हे महाभायवाली! तू क्रोध करती है तेरे पुत्रगण गुणों में एवं आचरण में अपने मामा के अनुसार हैं।

कश्यप ऋषि ने अपनी सुन्दरी पत्नि खशा से ऐसा कहकर उन पुत्रों को प्यारसे पास बुलाया। खशा ने उन पुत्रों का सब वृतान्त

कश्यप को सुनाया। माता ने जैसा जैसा पुत्रों को बताया कश्यप ने वैसा ही उनका नाम रख दिया। बड़े पुत्र ने माता को भक्षण करना और खींचना कहकर सम्बोधन किया था इससे उसका नाम यक्षयति धातु के आधार पर 'यक्ष' नाम रखा। दूसरे पुत्र ने मेरी माता की रक्षा करी, कहा था इससे रक्ष (पालन करने वाली) धातु के आधार पर उसका नाम राक्षस रखा। बाद में उनको भूखा जानकर अति आश्चर्य में होकर उनको रक्त चर्बी भक्षण करने की आज्ञा दी और पुनः वरदान दिया कि रात्रि के समय में ही तुम्हें सब वस्तुएँ मिल सकेंगी। तुम दोनों रात्रि में आहार विहार करने वाले होंगे। और दिन में सोया करोगे। तुम दोनों अत्यन्त बलवान होगे। इस समय तुम धर्म का पालन करते हुए अपनी माता की रक्षा करो। ऐसा कहकर पिता कश्यप जी अन्तर्धान हो गये। पिता के चले जाने पर उन दोनों पुत्रों ने प्राणियों की हिंसा करके बुरे मांस इत्यादि अखाद्य वस्तुओं का खाना शुरू कर दिया और अपने पिता के कहे अनुसार विपरीत कार्य करने लगे। वे दोनों बहुत बलवान पराक्रमशाली विशाल शरीर वाले थे। वे बड़ी कठिनता से किसी दूसरे के वश में होते थे। ये दोनों बहुत मायावी थे, एक क्षण में कहीं दिखाई देते थे और कहीं छिप जाते थे, ये दोनों बडी भीषण क्रूर प्रकृति के थे। अपनी इच्छानुसार रूप रखकर घूमने वाले थे। ये अपनी भीषण आकृति वालों का भोजन भी उन्हीं के अनुरूप बहुत अधिक और भीषण था, ये दोनों जहां भी देवता, ऋषि, मनुष्यों को सर्पों, पिशाचों, गन्धर्वों, किन्नरों, पशुओं पक्षियों को देखते थे उन्हें खाने के लिये दौड़ते थे। एक बार इन राक्षसों ने देवराज इन्द्र को खाने के लिये पकड़ लिया और फिर इन्होंने इन्द्र को न मारकर उनसे दो वरदान मांग लिये। एक बार यक्ष रात को अपने खाने की खोज करता हुआ घूम रहा था कि कुछ दूरी पर उसे कुछ बातचीत की आवाज आई और वह उसी आवाज की तलाश करते२ आगे बढ़ा।

आगे जाकर उसने दो विशाल जानु वाले पिशाचों को देखा, उन पिशाचों की आंखें पीली थीं और उनके रोम ऊपर की तरफ खड़े थे आंखें गोल थीं, वे पिशाच अत्यन्त भयानक आकृति के रक्त और चर्बी को खाने वाले थे वे मनुष्यों को खा जाते थे। उन विशाल पिशाचों के साथ उनकी दो कन्याएँ थीं, वे दोनों कन्याएँ अपनी इच्छानुरूप शरीर धारण करने वाली परम सुन्दरी थीं, परम सुन्दरी होते हुए भी वे दोनों कन्याएँ पिशाचों के समान आचरण करने वाली थीं। उन कन्याओं को साथ लेकर वे पिशाच अपने भोजन की खोज में घूम रहे थे। उन सब पिशाचों ने इस महा बलवान राक्षस को घूमते देखा, वे राक्षस और पिशाच दोनों आपस में आमने सामने मिलकर अपनी अपनी जान बचाने की चिन्ता करने लगे। इसके बाद तब वे दोनों कन्याओं के पिता पिशाच अपनी कन्याओं से कहने लगे कि तुम दोनों इस राक्षस को शीघ्र ही जीते जी पकड़ लाओ तब वे दोनों कन्याओं ने अपने पिता के कहे अनुसार उस राक्षस को पकड़ लिया और अपने पिता के पास ले आईं। तब उन पिशाचों ने उस राक्षस से पूछा कि तुम कौन हो? किसके पुत्र हो! तब उस राक्षस ने अपना परिचय बताया। उस राक्षस का हाल जान कर बलवान अज और खराड़ नाम के पिशाचों ने सन्तुष्ट होकर अपनी दोनों कन्याओं का विवाह उसके साथ कर दिया। अज और खराड़ ने अपनी सुन्दर दांत वाली पुत्री का विवाह विधिपूर्वक उसके साथ कर दिया, फिर उसने राक्षस को अपनी कन्या के गुण स्वभाव और धन का परिचय सुनाया। खराड़ ने कहा जो मेरी ब्रह्माधना नाम की कन्या है इसके शरीर में रोम नहीं है यह सात्विक उपायों से पैदा किये हुए धन का आहार करती है और ब्रह्म की आराधना में तत्पर रहती है। हमारी जो दूसरी जन्तुधना नामकी पुत्री है वह जन्तुओं का भोजन करती है। इस तरह उन दोनों पिशाचों ने कन्याओं का परिचय उस राक्षस को सुनाया। जन्तुधना नाम की जो कन्या है इसके पूरे शरीर के अंगों में बाल हैं और जो ब्रह्माधना है इसके कान के ऊपर तक रोम हैं उस ब्रह्माधना के ब्रह्मधन पुत्र और तत्वला कन्या हुईं

इन पिशाचों की कन्याओं ने इस प्रकार दो दो सन्तानों को उत्पन्न किया। अब मैं आपसे इनके द्वारा होने वाली प्रजाओं की सृष्टि का वर्णन क्रम पूर्वक करूंगा।

हेतु, प्रहेतृ, उग्र, पौरुषेय, वध, विस्फूर्जि, वात, आपव्याघ्र, और सर्प इत्यादि ये दस राक्षस यातुधान के आत्मज और सूर्य के मनुचर हैं, ये राक्षस सूर्य के साथ ही घूमते हैं। हेतु के पुत्र का नाम लंकु के माल्यवान और सुमाली नाम के दो पुत्र पैदा हुए। उसके बाद अब में आपको प्रहेतृ के पुत्रों का वर्णन सुनाऊंगा। प्रहेतृ के पुलोमा नाम का एक पुत्र उत्पन्न हुआ, वह बहुत प्रसिद्ध था अपने समय में बध के दो पुत्र विघ्न और शमण नाम के उत्पन्न हुये, ये दोनों पुत्र बहुत ही दुराचारी थे। रुमन नाम का राक्षस विद्युत का पुत्र था, वह भी बहुत दुराचारी निकला। स्फूर्ज के पुत्र का नाम निकुम्भ था, वह बहुत उग्र प्रकृति का और ब्रह्म राक्षस था। बात के पुत्र का नाम विराग था और आप के पुत्र का नाम जम्बुक था। व्याघ्र के पुत्र का नाम निरानन्द था वह निरानन्द नामका राक्षस जन्तुओं को कष्ट देता था। ये सभी राक्षस क्रूर प्रकृति के परमवीर शाली राक्षस थे। अब मैं ब्रह्मधान के पुत्रों का वर्णन सुनाऊंगा। यज्ञ, पिता, धुनि, क्षेम, ब्रह्मा, पाप, ब्रह्मस्वाकोटक, कलि और सर्प-ये दस ब्रह्म धना के पुत्र माने जाते हैं। इन दसों पुत्रों की बहिनें ब्रह्मराक्षसी थीं, इनमें चार ब्रह्म राक्षसी दुष्ठ स्वभाव की थीं, इन चारों के इस प्रकार नाम हैं। रक्त कर्ण, महाजिह्व अक्षया, और उपहारिणी हैं। इन ब्रह्म राक्षसियों के गर्भ से ही पूरी पृथ्वी पर निवास करने वाले राक्षसों के जन्म हुए, ये ब्रह्मराक्षस गण प्रायः लिसोढे के वृक्षों पर रहते हैं। अब यक्ष के पुत्रों का वर्णन करूंगा। यक्ष ने क्रतुस्थली नामकी पांच अव्यवों से स्थूल अंगों वाली अप्सरा को पाने की इच्छा की। उस अप्सरा को पाने के लिए वह यक्ष नन्दन बन में घूमता रहना, और वह गौभ्राज और चैत्ररथ नाम के बनों में भी घूमता फिरता, लेकिन उसको पाने के लिए उसे कोई उपाय नहीं मिला, अपनी

कुरूपता को और बुरे कर्म से दूषित होने के कारण वह अपने मनमें सोचा करता था कि इसी कारण से मुझ से सभी जीव भयभीत और अद्विग्न रहते हैं। अतः तब उसने एक युक्ति सोची, और उसको हल करने का उपयोग किया। उसने वसुरुचि नाम के गन्धर्व का सुन्दर रूप धारण करके अप्सराओं के बीच में ऋतु स्थली नाम की अप्सरा को पकड़ लिया, अप्सरा ने वसुरुचि को जान कर उस यक्ष के साथ पूर्ण मनोयोग और सद्भाव के साथ व्यवहार किया। फल स्वरूप उन सब अप्सराओं के सामने ही उस यक्ष ने क्रतुस्थली के साथ सम्भोग किया और उसी समय उसी स्थान पर उस अप्सरा के फलस्वरूप एक पुत्र उत्पन्न हुआ, वह पुत्र लम्बाई चौड़ाई में अपने पिता यक्ष की तरह विशाल था और पैदा होते ही वह पुत्र सभी शोभा से युक्त था। उस पुत्र ने पैदा होते ही अपने पिता से कहा कि मैं "राजा हूँ, मेरा नाम नाभि है" पिता ने पुत्र से कहा कि तुम्हारे यहां पर पैदा होने पर कोई डर नहीं है, वह यक्ष पुत्र नाभिस्वरूप में माता के समान सुन्दर और पिता के समान वीर हुआ। ऐसे पुत्र के उत्पन्न होने पर वह यक्ष अपने स्वाभाविक रूप में आगया, इस प्रकार स्वाभाविक रूप में आकर क्रतुस्थली अप्सरा को विस्मित करता हुआ बोला कि हे सुन्दर कटि वाली! सुन्दरी। अब तुम अपने पुत्र को साथ लेकर मेरे घर चलो। यक्ष के ऐसा कहने पर और उसका वास्तविक रूप देख कर सभी अप्सराओं की क्रोध के मारे बुद्धि भी क्षीण हो गई, और भयभीत होकर भग गई। उन सभी अप्सराओं के साथ क्रतुस्थली भी अपनी सखियों के साथ पीछे पीछे चल दी, उसके पुत्र ने उसको सांत्वना दी और उसे गन्धर्वों और अप्सराओं के समूह में पहुँचा र वापिस लौट आया। अप्सराओं ने क्रतुस्थली के गर्भ से यक्ष द्वारा पुत्रउत्पन्न होते देखा था, अतः उन सभी अप्सराओं ने मिल कर एक स्वर से क्रतुस्थली से कहा कि तू यक्षोंकी माता है। इसके बाद यक्ष अपने पुत्र के साथ अपने घर को चला गया, उस स्थान पर यक्ष बरगद के वृक्ष पर रहते थे बरगद के वृक्षों पर यक्षगण निवास

करते हैं यक्षों को बरगद का वृक्ष सभी प्रकार से प्यारा लगता है। य रजत नाम के गुणकों का पितामह था, उसने अनुहलाद नाम के दैत्य की परम सुन्दरी कन्या भद्रा के साथ अपना विवाह किया, भद्रा से जितेन्द्रिय मणिवर नाम का पुत्र तथा दूसरा पुत्र मणिभद्र नाम का उत्पन्न हुआ, ये मणिभद्र इन्द्र के समान वीर पराक्रमी था। इन दोनों पुत्रों की पत्नियां आपस में सगी बहनें थीं, ये दोनों बहनें क्रतस्थली की कन्या थीं। इन कन्याओं का नाम पुण्यजनी और देवजनी था। पुण्यजनी ने मणिभद्र के संयोग से बहुत से शुभ आचार करने वाले चौबीस पुत्रों को उत्पन्न किया, ये चौबीस पुत्र सदाचारी और पुण्यात्मा थे। इनके नाम इस प्रकार हैं। सिद्धार्थ, सूर्यतेज, सुमन्त, नन्दन, कन्यक, यविक, मणिदत्त, वसु सर्वानुभूत, शंख, पिंगाक्ष, भीठ, मन्दरशोभि, पद्म, चन्द्र प्रभ मेघपूर्ण, सुभद्र, प्रद्योत, महौजस, द्युतिमान, केतुमान, मित्र, मौलि, और सुदर्शन थे। ये सभी पुत्र मणिभद्र के संयोग से पैदा हुये, इनके पुत्र और पौत्रादि भी पुण्यकार्य करने वाले सदाचारी थे।

इसके बाद मैं आपको देवजनी की सन्तानों का वर्णन सुनाऊंगा। देवजनी ने मणिवर के संयोग से बहुत से पुत्रों को उत्पन्न किया, उन पुत्रों के नाम इस प्रकार हैं। पूर्णभद्र हेमरथ, मणिमत, नन्दिवर्धन, कुस्तुम्बुरु, पिशंगभ, स्थूल कर्ण, महाजक, श्वेत, विपुल, पुत्रवान, भयावह, पद्मपूर्ण, सुनेत्र, यक्ष, बाल, बक, कुमुद, क्षेमक, वर्धमान, दम, पद्मनाभवरांग, सुवीर, विजय, कृति पूर्णमास हिरण्याक्ष सुरुप इत्यादि ये सभी पुत्र देवजनी ने मणिवर के संयोग से उत्पन्न किये थे। ये सभी पुत्र गुह्यकों के नाम से पुकारे जाते हैं। इन में कुछ पुत्र तो सुन्दर रूप वाले थे कुछ कुरूप भी थे लेकिन सभी माला धारण करने वाले थे और देखने में सभी प्रिय लगते थे। इन पुत्र पौत्रादिकों की सख्या सौकड़ों से सहस्त्रों तक की थी। खशा के पुत्र जो दूसरे थे वे इच्छानुसार रूप बदलने वाले राक्षस थे, उन मुख्य पुत्रों का नाम इस प्रकार है। लालावि कुथन भीम सुमाली मधु विस्फूर्जित विद्युजिह्व मामग धूम्रित चन्द्रार्क सुकट, बुध्न कपिलोम प्रहासक क्रीड परशुनाभ चक्राक्ष शंत

दष्ट्र, राक्षस तुण्ड केश, यक्ष अकम्पन, दुर्मुख, और शिलिमुख ये सभी श्रेष्ठ परम पराक्रमी राक्षस तथा गण रूपी थे। ये सभी देवताओं के समान सभी लोकों में घूमा करते थे, इन पुत्रों के अलावा खशा के सात कन्यायें भी थी, मैं अब आपको उन कन्याओं से प्रजा की सृष्टि का वर्णन सुनाऊंगा। इन कन्याओं के नाम इस प्रकार हैं। आलम्बा, उत्कचा, कृष्णा, निऋता, कपिला, शिवा, और केशिनी थे, ये सात कन्या ऊपर लिखे सभी राक्षसों की बहिन थीं। संसार में मांस खाने वाले जीव हिंसक, अत्यन्त पराक्रम दिखाने वाले बड़े-बड़े राक्षस गणों को इन कन्याओं ने उत्पन्न किया। इनमें से कुछ अच्छे भी थे। आलम्बा से आलम्बेय नाम के राक्षस सभी दुष्ट स्वभाव वाले थे। उत्कचा के उत्कचेय नाम के पुत्र दुष्ट स्वभाव वाले ही पैदा हुए। केवल काष्ठोंप और शैनेय वाले राक्षस अच्छे स्वभाव वाले थे।

इसी तरह से महादेव जी के अनुचरों गणेश्वरों के चर ने नैऋर्त नामक प्रजा को उत्पन्न किया। उस प्रतापी ने यक्षों और राक्षसों को उत्पन्न किया। ये सभी प्रतापवान नैर्ऋत नाम से प्रसिद्ध हुए। ये सब देव राक्षस कहे जाते हैं। इन सबों का स्वामी विरूपक हुआ। नैऋत की प्रजा भगवान शंकर के गण बने। दैत्यों के प्रतापी राजा कुम्भ ने प्रतापी वीर और साहसी कपिलेय नाम के दैत्यों और राक्षसों को उत्पन्न किया। कम्पन नामक यक्ष ने केशनी के गर्भ से और दूसरे राक्षसों को पैदा किया जो महाबलवान थे। केशनी की कन्या नीला के संयोग से आलम्बेय गण के सुरसिक नाम के राक्षसों से बहुत से दुष्ट स्वभाव वाले राक्षस उत्पन्न हुये। ये सभी राक्षस नैल नाम से विख्यात हुए। इनके वन्शों में होने वाली सन्तान बहुत है। इसका वर्णन करना कठिन है। नीला की एक कन्या थी जिसका नाम विकचा राक्षसी था। वह दुष्टा तथा मध्यम पराक्रम वाली थी। उसके भी निर्ऋत के द्वारा सुरों (असुरों) की उत्पत्ति हुई। उनका वर्णन इस प्रकार है।

वे घोर असुरगण विकराल दाड़ों वाले कुरूप, लम्बे कान और बड़े पेट वाले थे । उनके नाम हारक, भीषक, क्रामक, वैनक, पिशाच वाहक और प्राकशक थे। ये राक्षक भूमि पर रहते थे । इनका पराक्रम मनुष्यों के तुल्य था। इन भूमि के राक्षसों से जो पराक्रमशाली अधिक होते हैं वे आकाशगामी होते हैं। ये अति लघु शरीर वाले होने से थोड़ी देर तक आकाश में उड़ते रहते हैं। इन्होंने तथा दूसर दुष्ट राक्षसों ने चारों तरफ से प्रायः आ काश को घेर लिया है। संक्षेप से इन क्षुद्र राक्षसों की आठ माताएँ हैं। नके अनुसार इनके आठ विभाग हैं। उनके क्रम से नाम इस प्रकार हैं इनमें से एक का नाम भद्रिका है और गण का नाम निकर है। इनमें ज्ञान और उन्नति के कारण हैं। दूसरी पूतना है। गण का नाम मातृ सामान्य है। यह पूतना मानव लोक के बच्चों को पकड़ने वाली तथा बच्चों को बहुत कष्ट देने वाली है। इन भूतों व गणों के अनेक गण इस पृथ्वी पर घूमा करते हैं। पुण्यजन, गुह्यक और देवजन नाम के यक्ष ये सब गुह्यक के अन्तर्गत कहे हैं। अगस्त, पौलस्त्य, विश्वामित्र के गोत्र में जो राक्षस गण पैदा हुए हैं उनके राजा कुबेर कहे गये हैं। ये अलकापुरी के स्वामी हैं। ये यक्षगण केवल आंखों से देखकर मनुष्य के मांसचर्बी खून को पी जाते हैं ये राक्षसगण मनुष्य के शरीर के भीतर घुसकर चूस लेते हैं। पिशाचगण बुरी तरह से पीड़ित करके पी जाते हैं जो सभी प्रकार से पराक्रमी, तेजस्वी, बलशाली, देवताओं के समान अधिकारी हैं वे असुर नाम से कहे जाते हैं। गन्धर्व लोग देवताओं की अपेक्षा तीन पापों से कम होते हैं। सभी गुह्य (यक्ष) गन्धर्वों की अपेक्षा प्रभाव में तीन पादों से हीन होते हैं। राक्षस भी यक्षों के समान प्रभावशाली होते हैं। इन यक्षों से पिशाच तीन गुण हीन होते हैं। इस प्रकार धन बल यश व पराक्रम में ये सब गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, पिशाच, देवता और असुरों की अपेक्षा हीन होते हैं।

सूतजी बोले—हे ऋषीगणो ! अब मैं आपको क्रोध के वश में रहने वाली प्राजाओं का वर्णन सुनाऊँगा। इससे आपका कल्याण होगा। क्रोध में स्वयं उत्पन्न होने वाली १२ कन्याएँ पैदा हुईं जो प्रलह ऋषि की पत्नियां बनीं। उनके नाम इस प्रकार हैं—मृगी, भृगमन्दा, हरिभ्रडा, इरायती, भूता, कपिशा, दंष्ट्रा, निशातिर्या, श्वेता, स्वरा और सुरसा। मृगी के हिरण नामक पुत्र भृग खरगोश बारहसिंगा, शरभ, रुरु प्रशत नाम के पशु भी हुए भृगमन्दा के गर्भ से सिंह उत्पन्न हुए। इन्हीं से ही नीलगाय, महिष, ऊंट बराह, गैंड़ा तथा गौरमुख नामक जंगली पशु उत्पन्न हुए। हरि ने बन्दरों का उत्पन्न किया। इनसे ही लांगुली बन्दर भेड़िया तथा और दूसरी जाति के बन्दर, किन्नर, बाघ, किंपुरुष, आदि जीव पैदा हुए।

इसके अनन्तर इरावती के पुत्रों को सुनाता हूँ। एक समय भौवन ने सूर्य के दो अन्य कपालों को लाकर अपने दोनों हाथों से पकड़कर रथन्तर का गान किया। उस समय वहां शीघ्र ही एक हाथी प्रकट हुआ। भौवन ने इरावती के साथ संगम किया था। अतः वह इरावती के गर्भ ये उत्पन्न हुआ था इसलिये वह ऐरावत नाम से प्रसिद्ध हुआ। देवराज इन्द्र का वाहन होने के कारण वह हाथियों (मतंगों) का राजा माना गया। ऐरावत अति शोभा सम्पन्न चार दांतों वाला तथा श्वेत वर्ण का है। ऐरावत के अंजन सुप्रतीक, वामन और पद्म ये चार पुत्र थे। उसकी हथिनी का नाम अभ्रमु था। श्वेता ने चार दिग्गज भद्र, मृग मन्द और संकीर्ण दिग्गजों को उत्पन्न किया। संकीर्ण और अंजम यमराज के वाहन हैं। भद्र और सुप्रतीक जो हरे रंग के हैं वे वरुण के वाहन हैं। पद्म और मन्द जो श्वेत वर्ण के हैं वे कुवेर का वाहन है। मृग जो श्याम वर्ण के हैं वे अग्नि के वाहन हैं पद्म नामक हस्ती

वरुण के वाहन में से एक है। उसके आठ पुत्र हुए—वे सब दुष्ट स्वभाव वाले हुए। उनके वंश में सफेद बाल व नाखून वाले पीले रंग के मतंगज उत्पन्न हुए। उन तथा अन्य नागों का वर्णन सुनाता हूँ—

पुण्डरीक नामक गज, कपिल (भूरे) रंग का तथा रथान्तर पुष्प के वर्ण की शोभा वाला गज है। इन दोनों से सुप्रतिष्ट तथा प्रमर्दन नामक पुत्र उत्पन्न हुए। इसके अलावा श्वेत, शूल, स्थूल, प्रभूति, ऊँचे सिखलि, शुद्ध बाल तथा नाखून वाले बलवान गज हुए। ये सब आकुलिक नाम से कहे गये है। इनके वंश में पुष्पदन्त बृहत्सामा षड़दन्त, दन्तपुष्पवान, तरुपर्णो नाम के गज उत्पन्न हुए। इनके हथिनियों के समागम के द्वारा पुत्र उत्पन्न हुए। इनके वंश के लम्बे होठों वाले सुन्दर दीखने वाले, श्यामवर्ण के, दुष्ट स्वभाव के लम्बे मुँह वाले और अनेक प्रकार की पीड़ा सहन करने में सशक्त गज उत्पन्न हुए।

वामदेव नाम का हाथी काजल के समान काले रंग का है। साम से वामन नाम का गज पैदा हुआ। इसकी स्त्री अंगदा थी। उसके नीलवत और लक्षण दो पुत्र हुए। ये सभी गज दुष्ट स्वभाव वाले थे। इनके कन्धे और शिरोभाग देखने में सुन्दर थे। वक्षस्थल उनके विशाल थे तथा अति वेग से चलने वाले थे। इन गजों के वंश में जो विकृत नाम के गज पैदा होते हैं वे मनुष्यों द्वारा बंधन में डाले जाते हैं। सुप्रतीक के समान सुन्दर आकार वाला कोई भी गज दूसरा नहीं है। उसके प्रहारी संपाती और पृथुश्चिति नाम के तीन पुत्र हुए। अंजन से अंजना और साम से अंजावती का जन्म हूआ। इन दोनों की माता भी आयु रज की पुत्री मानी जाती है। इनके वंश में काले अलग अलग सिर वाले चौड़े मोटे ताजे काले वर्ण के पीले चौड़े मुख वाले हाथी पैदा होते थे।

चन्द्रमा और साम के पिंगला, कुमुदद्युति पैदा हुए। पिंगला के महापद्म और उर्मिकाली नाम के दो पुत्र हुए। उसके वंश में अत्यन्त दुष्ट स्वभाव वाले, बलशाली लम्बे पेट वाले, बड़े २ दांत वाले, हाथी युद्ध में रुचि वाले नाग उत्पन्न हुए। देवासुर संग्राम में देवताओं ने अपनी विजय के लिये इन्हीं हाथियों को अपने पास रखा था। विजय पाने के बाद उनको छोड़ दिया। इसके बाद सभी हाथी विभिन्न दशाओं को चले गये।

इनके वंश में उत्पन्न विनम्र स्वभाव वाले हाथियों को देवताओं ने अंग, लोमपाद, सूत्रपाद को दिया। दो (रद) दांत होने के कारण इनका नाम हिरद पड़ा। हस्त (सूँड) होने के कारण इनको हस्ती या हाथी कहा जाता है। कर (सूँड) के कारण इनको करी भी कहा गया है। वरण (पूजन) होने के कारण से इसको वारण, दो दांत होने के कारण दन्ती, गर्जन (चिंघाड़ने) के कारण नाग, मतंग से उत्पन्न होने के कारण कुँजर, नागों (वृक्ष या पहाड़ो) के दुश्मन होने से नाग इनको सूँड़ तथा मुँह दोनों के द्वारा जलपान करने के कारण द्वित कहते हैं। सामवेद के गान करने पर ये पैदा हुए हैं इसलिये ये 'समाज' कहलाते हैं। इनकी जीवपीछे को लौटी रहती है जिसके कारण ये बोल नहीं सकते हैं ऐसा इनको अग्नि का शाप होने के कारण हुआ है। इनके बल की स्फूर्ति न रहना लिंग और अंडकोष का छिपा रहना सब कुछ ब्रह्मा (स्वयंभू) तथा देवताओं के शाप से हुआ है। देव दानव गन्धर्व पिशाच सर्प राक्षस आदि जिन कन्याओं से पैदा हुए उन्हीं कन्याओं में दिग्गजों के संयोग से इन हाथियों की उत्पत्ति हुई है। इन हाथियों की कथा कह चुका। इन हाथियों का राजा विभावसु है पूर्व दिशा में कौशिकी से समुद्र पर्यन्त एवं उसके बाद गंगा तट से समुद्र तट तक पूरा प्रदेश

अंजन नामक हाथी और उसके वशज के अधीन कहा जाता है। विन्ध्याचल से दक्षिण तक गंगा के निकलने की जगह से लेकर कलिंग देश तक का जंगल सुप्रतीक नामक हाथी का जंगल है। उत्कल प्रान्त के पश्चिम से लेकर वेदि देश तक जो पांचग जंगल है वह वामन नामक हाथी के वंशजों का जंगल है। लौहित्य के दूसरे किनारे से पच्छिम समुद्र के किनारे के पर्वतों के पास तक का जंगल यम वन कहा गया है।

हे प्रभो ! रुद्र के अनुचर भूत भूति से पैदा हुए हैं। इनमें से कुछ बहुत ही छोटे, कुछ समान आकार वाले थे। और कुछ भूत लम्बे कान वाले, लम्बे होठ, और जीभ वाले लम्बे स्तन वाले तथा लम्बे पेट वाले हैं। कुछ एक समान रूप वाले थे तथा कुछ एक दम कुरूप थे। इनमें कुछ के नितंब बहुत लम्बे थे, किसी के मोटे पिण्डाकार पेट थे। ये भूत गया सरोवर, समुद्र, नदी, इत्यादि जल के किनारे रहते हैं, इनमें कुछ काले रंग के हैं, कुछ गोरे रंग के हैं, कुछ नीले रंग के हैं, कुछ श्वेत रंग के, कुछ पीले गहरे रंग के, कुछ लोहित रंग के, कुछ लाल रंग के हैं तथा कुछ चितकबरे रंगों के हैं। इन सभी भूत गणों के स्वभाव दुष्ट राक्षसों के स्वभावों की तरह ही दुष्ट स्वभाव हैं। इनमें से कोई मूंज की तरह केश वाले कोई हंसी केश तथा कोई सर्प का जनेऊ पहनने वाले थे। किसी की आंखें फूटी हुई थी, किसी की कुरूप आंखें थीं किसी की एक आंख फूटी हुई थी। किसी के बहुत शिर थे किसी के एक भी शिर नहीं था किसी के एक शिर था। कोई बहुत ही दुष्ट स्वभाव के थे। कोई बहुत रोम वाले थे कोई बिना रोम के थे। कोई कोई बहुत लम्बी जटाओं वाले थे, कोई कुबड़े थे, कोई बौने थे, किसी के एक कान था, कोई कोई के बहुत बड़े कान थे, किसी के कान खूटें के समान थे, कोई बिना कान के थे, किसी के नाखून बहुत बढ़े हुये थे, किसी के एक भी दांत नहीं था, किसी के दो जीभें थीं किसी के एक हाथ थे किसी के दो हाथ थे, किसी के तीन हाथ थे, किसी

के एक भी हाथ नहीं था। किसी के एक पैर था, किसी के दो पैर थे तो किसी के तीन पैर थे, किसी किसी के बहुत से पैर थे। बहुत से बहुत बलवान हैं। बहुत से योगाभ्यास करने वाले हैं। बहुत से क्रूर बुद्धि के हैं, कोई कोई अपनी इच्छानुसार रूप रखकर घूमने वाले हैं बहुत से शुभ कल्याणकारी तथा पुण्य कार्य करने वाले तथा मीठा बोलने वाले थे, कोई कोई अपने हाथों में कुश रखते थे। कोई कोई हाथों से खाने वाले थे, कोई शिर से खाने वाले थे, कोई कोई मुण्डमाला पहनते थे कोई कोई हाथों में धनुष बाण रखते थे, कोई कोई मुग्दर हाथोंमें रखते थे। कोई कोई तलवार और भाले रखते थे, किसी किसी के नेत्र चमकते हुए होते हैं। कुछ अन्न के खाने वाले होते हैं। कुछ मांस के खाने वाले होते हैं। बहुत से सुन्दर होते हैं, बहुत से कुरूप होते हैं, बहुत से रात के समय तथा सन्ध्या के समय घूमने वाले होते थे। बहुत से केवल दिन में ही घूमते थे। ये सभी निशाचर ब्रह्मचारी होते थे, इनमें किसी के स्त्री तथा पुत्र नहीं था। ये सभी निशाचरों को भूत ने पैदा किया। इन सभी आत्म योगी भूतों की संख्या गिनती में एक लाख थी। मैंने आपको भूति के सभी पुत्रों का वर्णन सुना दिया है। कपिशा कुमाराड़ी ने कुष्माराड के सम्भोग से पिशाच दम्पतियो को पैदा किया, ये सभी कपिश भूरे रंग के थे। कपिश रंग के होने के कारण इनको पिशाच कहते हैं। ये सभी मास खाने वाले थे, इनके अलावा सोलह पिशाच दम्पती और हैं अब मैं आपको उनके वंशधरों का नाम सुनाऊँगा, ये सभी मनुष्यों के खाने वाले थे। इन सोलह दम्पति के नाम इस प्रकार हैं—छगल और छगली, दूसरा वक्र और वक्रमुखी तीसरा सूचीमुख और सूची चौथी कुम्भपात्र और कुम्भी पाँचवां वज्रदंष्ट्र और दुन्दुभि छठा उपचार और अपचार सातवां उलूखल उलूखली आठवां अनके और अनकी नवां कुखण्ड और

कुखण्डिका, दसवां पाणिपात्र और पाणिपात्री, ग्यारहवां पांशु और पांशुमती, बारहवां नितुराड़ और नितुराड़ी, तेरहवां निपुण और निपुणा, छलाद और उच्छेषणा तथा पुस्कन्द और स्कन्दिका ये सोलह पिशाच दम्पतियों के गण माने जाते हैं अजामुखी, बकमुख, पूती, स्कन्दी, विपाक, अंगारिक कुम्भपात्र, प्रकुन्दक, उपचार, उलूखलिक, अनर्क, कुखण्डिक, पाणिपात्र, नैतुण्ड अर्णश, निपुण, सूचीमुख, और उच्छेषणाद कहे जाने वाले सोलह, कुल हैं। कुष्माण्ड के कुल में उत्पन्न होने वाले इन कुलीनों का वर्णन किया है। इन्हीं के वंशों में ही अन्य पिशाच गणों की उत्पत्ति जाननी चाहिए। इनके पुत्र पौत्रादि की संख्या अनन्त हैं, जो अत्यन्त भयानक है। अतः उन पिशाचों के लक्षण सुनिये—

पिशाचों के सभी अंग केश से भरे रहते हैं। गोल आंखें दांत तक नाक आदि होते हैं। परन्तु अंग टेढ़ा मेढ़ा है। ये मनुष्य का भक्षण करते हैं और मुख नीचे को किये रहते हैं। कुष्मांडिक कहे जाने वाले पिशाचों के केश होते ही नहीं। यहां तक कि रोम भी नहीं होते। चमड़े, चर्बी, को अपने शरीर पर वस्त्रों की जगह लपेटे रहते हैं। वे हमेशा मांस तथा तिल का आहार करते हैं। वक्र नामक पिशाचों के सभी अंग हाथ पैर आदि टेढ़े मेढ़े होते हैं। वे चलने में भी वक्र होते हैं। नितुन्दक नामक पिशाच लम्बे पेट वाले, ऊँचीनाक, छोटा शरीर, छोटे शिर हाथ वाले हैं, वे तिल भक्षी और सुन्दर कान वाले हैं। अनर्क मर्क नामक पिशाच गण बौने हैं वे अधिक वाचाल तथा उछल उछल कर चलने वाले हैं वे वृक्षों पर निवास करते हैं और वहीं पर आहार विहार करते है। पांशु पिशाचों की बाहें ऊपर को रहती हैं। उनके रोम भी ऊपर को खड़े रहते हैं। वे अपने अंग से धूल गिराते रहते हैं। उपवीर नाम पिशाच श्मशान में निवास करते हैं। वे अपनी धमनियों को जानने वाले, दाड़ी मूँछ धारी तथा वस्त्र धारणा करने वाले होते हैं।

उलूखल नामक पिशाच झुण्डों में चलते हैं उनकी लम्बी जीभ होती है तथा अपने होठों को चाटने वाले हैं। हाथी तथा ऊँट की तरह मोटे शिर वाले हैं। कुछ कुम्भ पाक नाम के पिशाच गण हैं जो बिना देखे हुए अन्न का भोजन करते हैं वे अति सूक्ष्म होते हैं। इनके शरीर पर रोम तथा पीले वर्ण के होते हैं। ये कहीं दीखते हैं। कहीं अदृश्य हो जाते हैं। निपुण नाम के पिशाच भूमि पर मनुष्यों को अकेले देख कर उनको खाने दौड़ते हैं। उनके मुँह कान तक फैले हुये होते हैं। उनकी भौंहें लम्बी होती हैं और उनकी नाक मोटी होती हैं। पूरण नाम के पिशाच निर्जन स्थान में रहते हैं जहाँ पर कोई भी जीव नहीं रहता है उस जगह पिशाच पूरण नाम के रहते हैं। इनके शरीर मोटे तथा हाथ पैर छोटे छोटे होते हैं। ये पिशाच छोटे छोटे बच्चों को पकड़ कर खाते हैं ये हमेशा प्रसूतिगृह में रहते हैं। इन पिशाचों के हाथ पैर पीछे की तरफ है। तथा छोटे शरीर के होते हैं तथा शीघ्र तेज चलने वाले होते हैं। ये युद्ध में जाकर खून को पीते हैं। स्कन्दी नाम के पिशाच नगे रहते हैं पिशाचों के बाल लम्बे होते हैं तथा ये पिण्डाकार होते हैं। इनके रहने का स्थान ठीक नहीं है कभी कहीं रहते हैं, कभी कहीं रहते हैं, और भी बहुत से पिशाच गण हैं वे पिशाच झूठा खाने वाले कहे जाते हैं। मैंने आपको इस तरह सोलह पिशाच जातियों का वर्णन सुनाया है। ब्रह्माजी ने अपनी ऐसी अल्प बुद्धि युक्त तथा तरह तरह की सूरत वाले पिशाचों को अन्तर्धान होने का तथा अपनी इच्छानुसार स्वरूप धारण करने का वरदान दिया।

पिशाच गण दोनों संध्याओं के समय इधर उधर घूमते रहते हैं। ये पिशाच उन स्थानों पर रहते हैं जो स्थान टूटे फूटे हो तथा जिस जगह अत्याचार पाप होते हों बिना लिपे पुते हों (जिस जगह कभी दीपक न जलता हो) इसके अलावा राजमार्ग गलियां, घर के समीप के उपवन, चबूतरे, चौराहे, द्वारदेश अकेले मार्ग में, नदियाँ, तीर्थ, देवीदेवताओं के कल्पित वृक्ष और श्मशान के पथ में ये सर्वत्र

पिशाच गण निवास करते हैं। अधार्मिक जन, वर्णाश्रम के हीन, शिल्पीजन, आदि को पिशाचों की आजीवि का कहा गया है। चोरी, विश्वासघात, एवं अन्यान्य कुत्सित ढंग द्वारा पैदा किया हुआ धन भी पिशाचों की जीविका है। मधु, मांस, भात, दही, तिल का चूरा, मदिरा, आसव, धूमा, हल्दी, तेल खिचड़ी, गुड़, मोथा, गुड़ और भात एक काले कपड़े में रखकर, धूप और पुष्प, इन सबके साथ पर्वों के दिन पिशाचों को बलि प्रदान करनी चाहिए। महेश्वर सभी भूतों का स्वामी है। द्रष्टा के व्याघ्र और सिंह पुत्र रूप में पैदा हुए। चीते, बाघ, और शेर, आदि भी पैदा किये।

इसके पश्चात् अब आप लोग ऋषा की सन्तानों का वर्णन सुनें। ऋषा की मीना, माता, कृत्ता, परिकृत्ता, और अनुवृत्ता ये पांच पुत्रियां थी। इनके पुत्र मकर (जो हजार दांत वाले हैं) पाठीन (जल जन्तु), तिमि, (विशेष मछली) रोदित (रोहू) ये सभी मछलियां मीना की सन्तानें हैं। इसके अतिरिक्त छोटे बड़े आदि चारों तरह के ग्राह, निष्क, और शिशुमार आदि भी मीना की सन्तानें हैं।

वृत्ता के जन्म के जन्तु जैसे कच्छप (कछुआ) सभी प्रकार के शंख आदि पैदा हुये। अनुवृत्ता ने मेढ़कों के सभी प्रकार (जाति) को ऐणेय और शम्बूक (घोंघा) के सभी भेदों को जन्म दिया। तथा कालकूर और जलौकट को भी उत्पन्न किया। ये ऊपर कही गई पांच शाखायें ऋषि के वंश की वर्णन कीं। तिर्यक योनि के वंश का विस्तार तो बहुत ही विशाल है। अब मैं स्वेज (पसीने से पैदा होने वाले जीवों) का वर्णन करूँगा।

हे द्विजो! इन स्वेदज जन्तुओं के पैदा करने वाले तो मनुष्य ही हैं। स्वेद और मल से पैदा होने वाले जीव जन्तु उशना कहलाते हैं। शिरवाल और वस्त्रों में होने वाले जूंआ आदि जीव यूका कहलाते हैं! सूर्यचन्द्र और अग्नि से तपी भूमि में जो जीव उत्पन्न होते हैं। तथा जो बादलों के पानी से भीगने पर तृण आदि

में जो जीव पैदा हो जाते हैं। वे सब स्वेदज कहलाते हैं। धूप से जल में, वर्षा के कारण, मृगादिक के शरीरों में जो अनेक जन्तु उत्पन्न होते हैं वे मीनक, पिघल, दंश, तित्तरपुत्रक, नील चित्र, अलक, आदि की संख्या बहुत अधिक है। ये जन्तु जलद तथा स्वेदज दोनों ही कहे जाते हैं। इनके अलावा, घी, उर्द, मूँग से भी जन्तु उत्पन्न होते हैं। इसी प्रकार बेल, जामुन, आम, सुपारी आदि फलों से भी अनेक जन्तु उत्पन्न हो जाते हैं। मूँग, कटहल, चावल सूखे वृक्षों की कोटर तथा बहुत समय की रखी वस्तुओं से उत्पन्न भी अनेक से जन्तु विशेष होते हैं। हे ब्राह्मणों, काठादि वस्तुओं घुन और क्षुद्र जन्तु उत्पन्न होते हैं। वृक्षों से एक प्रकार की नीली मक्खियां भी पैदा होती हैं। सभी प्रकार की सूखी वस्तुओं से पुत्रिका उत्पन्न होती है। शतियों से अनेक प्रकार के वर्षा कालीन सर्प पैदा होते हैं। सूखे गोबर से विच्छू उत्पन्न होते हैं। इसी प्रकार गाय और भैंसों के शरीर से भी स्वेदज जीव उत्पन्न होते हैं। मछली आदि जन्तु तो अण्डे से पैदा होते हैं। इसी प्रकार कबूतर, कुरर आदि पक्षी भी अण्डे से पैदा होते हैं। छोटे छोटे सूक्ष्म जूं (यूक) भी अण्डों से उत्पन्न होते हैं। केकड़ा (आठ पैर वाला जन्तु विशेष) भी अण्डे उत्पन्न होता है। सभी प्रकार की मक्खियां भी अण्डों से उत्पन्न होती हैं।

कुछ मक्खियां झूंठी वस्तुओं, कीचड़ व जल में रहती हैं। सभी प्रकार के मच्छर, भौरे, पुत्रिका, पुत्रसक्तक आदि तुच्छ जन्तु तृणों से उत्पन्न होते हैं। माणिच्छेद तथा व्याल ये पोतज कहलाते हैं। करीषों से उत्पन्न शतवेरि के बहुत से भेद हैं। इस प्रकार से स्वेदज जन्तुओं की संख्या असंख्य है। मैंने इन्हें संक्षेप में तुम्हें कह दिया ये सब जन्म प्राक्तन कर्म के आधीन हैं।

इसके अतिरिक्त नैऋत प्राणी उपसर्गज कहे जाते हैं। जन्म लेने वाले कुछ प्रापरिपूत कहलाते हैं तथा कुछ औत्पत्तिक कहे जाते हैं। सभी देवता लोग औत्पत्तिक हैं और कुछ देवता योनि के द्वारा

उत्पन्न होते हैं। श्याम, शबल, अर्जुन, कृष्ण, धूम्र, अरुण, और तुलालाबू ये कद्रू की सन्तानें हैं। सुरसा के एकसौ शिरोमृत नाम वाले पुत्र थे सर्पों का राजा तक्षक और नागों का राजा वासुकि है। ये तमोगुणी तथा क्रोध वाली प्रजा हैं।

इसके बाद अब पुलह की सन्तान जो पुलह के पुत्र के योग से ताम्रा में उत्पन्न हुई इनका वर्णन सुनो ? ये सन्तानें खूब प्रसिद्ध हैं। श्येनी, भासी, क्रौंची, धृतराष्ट्री और शुकी ये ताम्र की सन्तानें हैं। इनमें श्येनी तो अरुण की पति हुई। उसके सम्पति और जटायु दो बलवान पक्षी उत्पन्न हुए। जटायु के जो पुत्र उत्पन्न हुए कौवा गद्ध और अश्वकर्णी हैं। सम्पति ने एक पुत्र और एक कन्या को जन्म दिया।

भासी क्रौंची शुकी धृतराष्ट्री और भद्रा ये गरुड़ की पत्नि बनीं। जिनकी सन्तानें निम्न प्रकार से हुईं। उनको यथा क्रम आप लोगों को सुनाता हूं। इन पक्षियों में से गरुत्मान के द्वारा शुकी ने त्रिशिर सुमुख बल महाबली पृष्ठ सुन्दर त्रिशंखनेत्र और सुरस नामक छै पुत्रों को जन्म दिया। इस गरुत्मान् (गरुड़) के पौत्रों की संख्या चौदह हजार है। उनके इन पुत्र पौत्रादिकों की संख्या द्वारा ही संसार में जहां जहां अपना वास करके रहते हैं उनको (स्थानों को) मैं आपसे वर्णन करता हूं।

समस्त शाल्मलि द्वीप सारा देवकूट पर्वत पर्वतों का राजा मणिमान और सहस्र शिखिर पर्णमोल सुकेश शतशृंग कौरज पंच-शिखिर क्षेम कूट आदि पर्वतों पर वे पक्षीगण सदानिवास करते हैं। बहुत बलशाली गरुड़ के नामसे पुकारे जाते हैं। उल्लू कबूतर मुर्गी मोर गौरेया कौआ तीतर इत्यादि पक्षी भासी के पुत्र माने जाते हैं। क्रौञ्ची से वार्धीणस नामके पक्षी पैदा हुए। कुरर सारस बगुले इत्यादि मांसाहारी पक्षी लेस्येनी से उत्पन्न हुए। हंस कलहंस चकवा इत्यादि पक्षी को धृतराष्ट्री ने पैदा किया।

इनके पुत्रों और पौत्रादिकों की संख्या असख्य है। मैंने आपसे गरुड़ की सन्तान का वर्णन किया है अब मैं आपको इस सन्तानों का वर्णन सुनाऊंगा। इस से बहुत सुन्दर कमल के समान नेत्र वाली तीन कन्याएँ पैदा हुई, उन तीनों कन्याओं ने लता पेड़ पौधे और अनेक तरह की वनस्पतियों को पैदा किया। उन कन्याओं के लता वल्ली, वीरुधा नाम थे। लता ने बनस्पतियों को पैदा किया और फूल फल से शोभित वृक्षों को पैदा किया। वल्ली ने गुल्मों को पैदा किया। और बांस इत्यादि को पैदा किया। वीरुधा की सन्तान वीरुध के नाम से प्रसिद्ध है, अभी मैंने आपको कश्यप के वंश की सन्तान का वर्णन सुना दिया है मैं आपको कश्यपजी की प्रजाओं की सृष्टि का वर्णन आपको सूक्ष्म रूप में सुना चुका हूँ इस सृष्टि क्रम को बहुत विस्तार के साथ हजारों वर्षों में भी नहीं कहा जा सकता है कश्यपजी की दो स्त्रियां थीं, इनमें अदिति धर्म परायण थीं और दिति बलशाली थीं। ये दोनों अपनी कठिन शुद्धात्मा के कारण मायाविनी कहलाती हैं। मुनि अध्ययन करने वाली तथा गन्धशीला कहलाती हैं। अरिष्टा गाने वाली कहलाती है तथा खशा क्रोध करने वाली कहलाती है। कद्रू बहुत दुष्ट स्वभाव की कहलाती है। और क्रोञ्ची बहुत सुनने वाली तथा अध्ययन करने वाली कही जाती हैं। इरा अनुग्रह करने वाली कही जाती हैं तथा दनायु भक्षण करने वाली कहलाती हैं। विनता भार ढ़ोने वाली कही जाती है तथा ताम्रा पाश रखने वाली कही जाती हैं, शील सदा चारी स्वभाव ये सब लोक में पूज्य माताओं का संक्षेप में वर्णन है। कश्यपजी की सम्पूर्ण प्रजा अपनी अपनी माताओं के कुल और स्वभाव के अनुसार थी। देवता, असुर गन्धर्व, यक्ष, पिशाच, राक्षस, सर्प, पशु, पक्षी लता बल्ली इत्यादि सभी प्रजाऐं इस तरह की मानी जाती हैं। मनुष्य के ये चार साधन ही धर्म अर्थ काम मोक्ष साधक हैं सभी मन्वन्तरों में मनुष्य का जन्म ही श्रेष्ठ माना गया है। मृत्युलोक में सुर और असुर अपने कार्य सिद्धि के लिए बार-बार

मनुष्य रूप में जन्म लेते हैं। देवताओं, असुरों, गन्धर्वों, अप्सराओं, यक्षों, पिशाचों, सर्पों, पक्षियों पशुओं, कीड़ों, मनुष्यों, ब्राह्मणों तथा सभी प्रकार की औषधियों का वर्णन मैंने आपसे किया है। जो मनुष्य इस कथा को श्रद्धा सहित पढ़ता और सुनता है वह दीर्घायु होकर धर्म, धान्य, वैभव तथा सुख प्राप्त रता है। अतः इस कथा की कभी निन्दा नहीं क नी चाहिए। ऐसा कह मनुष्य इस लोक में भी सुखी रहता है। और परम गति को पाता है। श्री व यु महा-पुराण का उपोद्घात् पाद में कश्यप की प्रजास्टष्टि नामक ६६ वां अध्याय समाप्त हुआ।

सत्तरवाँ अध्याय

[ऋषियों के वंशों का वर्णन]

सूतजी बोले—हे ऋषियो ! इसके बाद प्रजापति ब्रह्माजी ने कश्यप जी द्वारा सभी सृष्टि पूर्ण होने के बाद उनके ऊपर उनका स्वामी (राजा) बनाने का विचार किया। सम्पूर्ण ब्राह्मणों, वीरुधों, नक्षत्रों, ग्रहों, यक्षों के ऊपर प्रजापति ब्रह्माजी ने चन्द्रमा को राजा बनाया। अंगिरा ऋषि की समस्त प्रजा का राजा वृहस्पति को बनाया। भृगुजी के वंश की सभी प्रजाओं का राजा शुक्र जी को बनाया। आदित्यों का राजा विष्णु जी को बनाया, मरुतों का राजा वासव को बनाया। दैत्यों का राजा प्रह्लाद को बनाया, साध्यों का राजा नारायण को बनाया। रुद्रों का राजा शंकर को बनाया तथा दानवों का राजा विप्रचित्ति को बनाया। जल का राजा वरुण को बनाया, राजाओं, यक्षों, राक्षसों के धन सम्पत्ति का राजा कुबेर को बनाया। पितरों का राजा यम को बनाया, भूत पिशाचों के राजा भगवान शंकरजी हुये पर्वतों का राजा हिमालय बने नदियों का सागर राजा हुये, गन्धर्वों के राजा चित्ररथ हुए, अश्वों के राजा उच्चैश्रवाः हुए। गाय बैल, हिरण तथा अन्य सभी प्रकार के पशुओं का राजासिंह को बनाया। सभी प्रकार के पक्षियों का स्वामी गरुणजी को बनाया। अशरीरी भूतों में गन्ध का स्वामी मारुत को बनाया। शब्द आकाश

तथा बल का स्वामी महाबली वसुदेव को बनाया। दांत वाले सभी सर्पों का स्वामी शेष जी को बनाया। और नागों का स्वामी वासुकी के बनाया। सरीसृप, सर्प और नागों का स्वामी तक्षक को बनाया। सभी नदी, पर्वत, सागर, मेघ, और आदित्य का स्वामी पर्जन्य को बनाया सभी अप्सराओं का स्वामी कामदेव को बनाया। ऋतुमास पक्ष, विपक्ष, मुहूर्त, पर्वकाल, काष्ठा आदि के प्रमाण, दोनों अयनों के गणित, और योग का स्वामी संवत्सर को बनाया इसके पश्चात् प्रजापति ने पूर्वादिशा में रज के पुत्र सुधामा को राज नियुक्त किया। फिर पश्चिम दिशा में रज के पुत्र महात्मा केतुमान अच्युत को राजा बनाया। इसके बाद सूर्य भगवान के पुत्र महाराज मनुको सभी मनुष्य मात्र का अधिपति नियुक्त किया। ये सभी अधिपतिगण आज भी सातद्वीपों एवं नगर वाली सम्पूर्ण पृथ्वी पर उसी प्रकार धर्म पूर्वक प्रजा का पालन कर रहे हैं।

पूर्व काल में स्वायंभुव मन्वन्तर में ब्रह्मा जी ने इन सबको राज्य पद पर अभिषेक किया था। हर एक मन्वन्तर में जो मनु होते हैं वे ही राजा बनाये जाते हैं। इस प्रकार बीते हुए मन्वन्तरों में न जाने कितने राजा बीत गये हैं और आगे के मन्वन्तरों में और भी अनेक राजाओं का अभिषेक किया जायगा। ये भूत एवं भविष्य के राजा लोग मन्वन्तरों के अधीश्वर कहे जाते हैं। इन्ही नरपतियों ने राजा पृथु को राज सूययज्ञ में अभिषेक किया था।

समस्त प्रजाओं के अधिपति कश्यप जी ने कठोर तप करके यह विचार किया कि मेरे दो पुत्र गोत्रों की वृद्धि करने वाले हों। उस समय कश्यप को दो पुत्र ब्रह्मा के मनोयोग पूर्वक वत्सार और असित नामक दो पुत्र हुए। वत्सार के निध्रुव और रैम्य का जन्म हुआ। रैम्य की सन्तानों को रैम्य गण कहते हैं। निध्रुव की सन्तानें निम्न प्रकार जाननी चाहिए।

च्यवन के सुमेधा की उत्पत्ति सुकन्या के गर्भ से हुई। निध्रुव की पत्नि जो थीं वह कुण्डपायिगणों की माता थी। असित के एक

पर्ण नामक पत्नि में ब्रह्मिष्ठ का जन्म हुआ। शांडिल्यों की बातें सुनकर दैवल परम यशस्वी पुत्र हुये। निध्रुवगण शाण्डिल्यगण और रेम्यगण सभी (तीनों गण) कश्यप गोत्रीय हैं। वर आदिक देवगण देवल की सन्तानें हैं' 'मनु' के ग्यारहवें चतुर्युग बीत जाने पर इन प्रजाओं की सृष्टि हुई है। मानस के पुत्र रिष्यन्त थे। रिष्यन्त का पुत्र दम नाम से प्रसिद्ध हुआ। इनके पुत्र भी मानस कहलाये। इन्हें तृण विन्दु भी कहा गया है। तीसरे त्रेता युग के प्रारम्भ में वे राज करते थे। इनकी कन्या इडविला अपने सौन्दर्य में अनुपम थी। वह कन्या पुलस्त्य को व्याही थी। इडविला में पुलस्त्य के द्वारा विश्रवा ऋषि का जन्म हुआ। उनकी चार पत्नियां थीं। देवाचार्य वृहस्पति की परम यशस्विनी कन्या देववर्णिनी विश्रवा को व्याही थी। माल्यवान की पुष्णेतकरा और वाका नामक कन्यायें भी विश्रवा की पत्नि थीं। तथा माली की कैकसी नामक कन्या भी विश्रवा को व्याही थीं। अब उनकी सन्तानों को सुनिये—

सबसे बड़े पुत्र वैश्रवण (कुवेर) को देववर्णिनी ने उत्पन्न किया। उनका स्वरूप राक्षसों का था। ज्ञान ऋषियों का सा था और विधान देवों के समान था। उसमें बल असुरों का सा था। तीन चरण थे। शरीर अति विशाल था। सिर बड़ा था। आठ दाँत थे। हरे रंग की दाढ़ी थी। कान खूँटे के समान खड़े थे। वे लाल रंग के थे। एक भुजा लम्बी और एक छोटी थी वह देखने में पीले वर्ण का भयानक लगता था। उसे संसार की माया आदि का पूर्ण ज्ञान था। ऐसे विश्वरूपधारी पुत्र को देख कर पिता ने कहा—यहस्वयं कुवेर है। (कुत्सित या भद्दा) वेर (शरीर) अर्थात जिनका शरीर भद्दा हो यह कुवेर विश्रवा का पुत्र वैश्रवण नाम से भी प्रसिद्ध हुआ कुवेर के ऋद्धि नामक पत्निमें नल कूवर का जन्म हुआ जो परम विख्यात पुत्र हुये।

इसके अतिरिक्त विश्रवा की पत्नि कैकसी के गर्भ से रावण, कुम्भकर्ण, शूर्पणखा तथा विभीषण का जन्म हुआ। रावण का कान खूँटे की तरह

उसके दश कण्ठ थे। वह पिंगल वर्ण का था। बाल उसके लाल रंग के थे। जन्म से ही काजल के समान काला था। बड़े बड़े दांत थे। कण्ठ लाल थे। बड़ा भारी बलवान था। उसकी सेना भी बलवान थी। वह सत्यबुद्धि था। शरीर दृढ़ तथा राक्षसों जैसा ही था। स्वभाव से वह क्रूर और भयंकर था। बहुत जोर का रव (शब्द) करने के कारण उसका नाम रावण पड़ा। पूर्व जन्म में वह दैत्यराज हिरण्यकशिपु नाम का था। इस राक्षस राज ने चारों युगों तक राज किया। वह राक्षसों के राजाओं में तेरहवां राजा था। इसके शासन काल की अवधि विद्वानों ने पांच करोड़ इकसठ नियुत बताई है। साठ लाख वर्षों तक वह रावण देवता और ऋषियों को घोर कष्ट देकर चौबीसवें त्रेता युग में अपनी तपस्या के नष्ट हो जाने पर वह महाराज दशरथ के पुत्र रामचन्द्रजी के हाथों से सेना सहित मारा गया।

पुष्पोत्कटा के महोदर, प्रहस्त, महापार्श्व और खर नामक पुत्र तथा एक 'कुम्भीनसी' नामकी कन्या हुई। वाला की सन्तानों में निशरा दूषण विद्युज्जह्व नामक राक्षस पुत्र और असलिका नामक कन्या पैदा हुए। ये दश राक्षस पुलस्त्य के वंश में बड़े क्रूर और देवताओं से भी अजेय थे। कुबेर सभी पक्षों का पुलस्त्य गोत्रीय राक्षसों का अगस्त और विश्वामित्र के गोत्र के वेदपणिगणों का व्रत आदि करने वाले किन्तु क्रूर ब्रह्म राक्षसों का वह राजा बनाया गया। अन्दराक्षस गण यज्ञ मुख हैं। यातुधान ब्रह्मधान और वार्ता ये तीनों दिन में गमन करते हैं। रात में नहीं। चौथे राक्षस निशाचर कहे गये हैं जो रात में गमन करते हैं। पुलस्त्य गोत्रीय ये राक्षस सात प्रकार के कहे गये हैं। ये राक्षस गोली आंख के पिंगलवर्ण महानकाय विशालपेट आठ दांत काले शंकु के समान कान वाले तथा ऊपर को उठे हुए रोम वाले हैं। इनके मुख कान तक फटे होते हैं। इनके बाल मूँज और धूँयें के समान होते हैं। शिर बड़े होते हैं कोई कोई देखने में सफेद मालूम पड़ते हैं। कोई बहुत छोटे और कोई बहुत

छोटे और कोई कोई बहुत बड़ी भुजा वाले थे। किसी किसी के मुंह तांबे के समान लाल और जीभ तथा होठ लम्बे लम्बे होते थे। नाक मोटी और भौहें लम्बी होती हैं। किसी के मुख तांबे के समान चमकते हुए हैं। किसी किसी के वर्ण नीले रंग के थे। ग्रीवा लाल वर्ण की थीं। देखने में महा भयंकर समूह बांधकर चलने वाले, अति भयानक कर्म करने वाले, कुण्डल, अंगद तथा माला चन्दन पहने हुए; मुकुट, पाग बांधे हुए अति दारुण थे। ये अन्न खाते थे तथा मांस भी भक्षण करते थे। ये सबके सब मायावी हैं इसलिए इनके बल व पराक्रम का किसी को पता नहीं चलता।

पुलह के सभी पुत्र मृग, व्याल, एवं दंष्ट्रा वाले जीव पैदा हुये। इसके अलावा भूत प्रेत पिशाच, भौरे, हाथी, बन्दर, किन्नर, मोर किंपुरुष, तथा अन्य मायावी एवं महाक्रोधी जीवों को उत्पन्न किया। वे सब पुलह की सन्तानें हैं। वैवस्वत मनवन्तर में महर्षि क्रतु के कोई सन्तान नहीं हुई। अपने तेज को समेट कर वे अपने ही स्थित रहे। वे नैष्ठिक ब्रह्मचारी थे। अब तीसरे प्रजापति अत्रि के वंश का वर्णन सुनिये।

अत्रि के दस पत्नियां थीं। जो महासुन्दरी तथा अति पतिव्रतायें थीं। भद्राख की दस कन्यायें घृताची अप्सराओं में पैदा हुई थी। जिनके नाम भद्रा, सूद्रा, शालदा, मलदा वेला, खला, गोचपला, मानरसा, और रत्न कूटा थे। इन सबका पति अग्नि गोत्रीय (वंशका) प्रभाकर था। उसने भद्रा में सोम को पैदा किया।

एक बार सूर्य राहु के द्वारा आहत होने पर पृथ्वी की ओर गिरने लगे। सभी भू मण्डल अंधकार मय हो गया। उस समय प्रकाश दान देने वाले ये यशस्वी सौम ही थे। आकाश मण्डल से जब सूर्य गिर रहे थे। तब ऋषि ने आशीर्वाद दिया कि तुम्हारा कल्याण हो, इससे वे आकाश से गिरे नहीं।

दस स्त्रियों में उनसे दस पुत्र उत्पन्न हुए वे कल्याण दायी और वेदों के पारगामी विद्वान थे। उनके परम विख्यात, यशस्वी, महा-

वसिष्ठ के वंशज अठारह गोत्र कर्त्ता हैं ये उपर्युक्त आठ ब्रह्मा के मानस पुत्र हैं। ये सब महा भाग्यशाली हैं। ये समस्त भू मण्डल में प्रसिद्ध हैं उनकी संख्या सैकड़ों नहीं आपितु हजारों तक है। इन्होंने समस्त पृथ्वी को सूर्य की किरणों के समान व्याप्त कर रखा है।

इति श्री वायु महापुराण के उपोद्घात पाद का ऋषि
वंश कीर्तन नामक
सत्तरवां अध्याय समाप्त हुआ ॥७०॥

—❀—

इकत्तरवाँ अध्याय

[श्राद्ध की प्रक्रिया]

यह सुन कर आत्मज्ञानी सूत जी की ये बातें सुन ब्राह्मणों ने पुनः पूछा—

शांशपायन ने कहा—हे सूतजी! भव जो महादेव जी हैं उनकी पत्नि सती कैसे दूसरी बार पैदा हुईं? हिमालय ने पितरों की कन्या मेना से विवाह किया था। वे पितरण कौन हैं? जिनकी यह मैना मानसी पुत्री है। मैनाक उनका दौहित्र है। पर्ण (पत्ता) खाकर तपस्या करने वाली भगवती उमा उनकी दौहित्री हैं। नदियों में श्रेष्ठ सुरसरि उनकी सबसे बड़ी सन्तानें हैं। यह तो हमने सब जान लिया है आप कृपाकर हमारी यह जिज्ञासा भी शान्त करिये। इन सबको जानने की हमारी उत्कट अभिलाषा है कि पितृगण कौन हैं? ये कहां पर निवास करते हैं। तथा श्राद्ध की विधि क्या क्या होती हैं। ये किसकी सन्तानें हैं तथा इनका नाम पितर कैसे पड़ा? स्वर्ग में रहने वाले पितृगण कौन हैं जो देवों के भी गुरु हैं। हम लोग श्राद्ध पूर्वक जो कुछ उन्हें भेंट करते हैं वह उन्हें कैसे सन्तुष्ट करती हैं। ये पितृगण दीखते क्यों नहीं कौन से पितृगण स्वर्ग में जाते हैं और कौन से नरक में जाते हैं।

पिता को, बाबा को तथा पिता मह को पिण्डदानों में नामोच्चारण

पूर्वक विधि समेत कौन कौन से श्राद्ध देने चाहिए ? श्राद्ध की वस्तुयें पितृश्वरों को कैसे मिलती हैं। जो नरक में निवास करते हैं, वे पितर किस प्रकार उनको ग्रहण करते हैं ? देवता भी स्वर्ग में पितरों की पूजा और श्राद्ध करते हैं ? इस सब विषय को विस्तर से हमें वर्णन कर के सुनाने की कृपा करिये।

सूत जी बोले—हे ऋषिगण ! आप की बातों का उत्तर मैं अपनी बुद्धि के अनुसार तथा श्रुति के अनुसार देता हूं, सो सुनो· प्रत्येक मन्वन्तर में ये पितृगण देवताओं के पुत्र रूप में प्रकट होते हैं। बीते हुए मन्वन्तर में ज्येष्ठ और भविष्य में कनिष्ठ रूप से उत्पन्न होते हैं। बीते हुए तथा वर्तमान पितरगणों को कहता हूँ सो आप सुनिये।

मनुष्यों के द्वारा श्रद्धा पूर्वक दी गई वस्तुयें ही श्राद्ध कहलातीं हैं। पूर्व काल में ब्रह्मा की सृष्टि में इन लोगों ने पूजा आदि कुछ भी नहीं की थी। तब ब्रह्माजी ने इन्हें शाप दिया कि तुम चेतना हीन हो जाओगे तुम कुछ भी नही जानते। ब्रह्माजी के शाप के कारण समस्त लोक मोह वश हो गये। वे अत्यन्त विनीत होकर ब्रह्मा जी ये पुनः प्रार्थना करने लगे। ब्रह्माजी ने उनसे नेक कल्याण के भाव से कहा तुमने महान पाप और अत्याचार किया है उसका प्रायश्चित करो और उसका विधान अपने अपने पुत्रों से पूछो। तब आप लोगों को ज्ञान प्राप्ति होगी। तब उन सब ने प्रायश्चित की विधियां बतलाई। पुत्रों द्वारा प्रायश्चित जानकर इन्हें पुनः चेतना प्राप्त हुई। उन्होंने अपने पुत्रों से निवेदन किया कि तुम लोग ही हम सब के पिता हो। क्योंकि तुम्हारे द्वारा ही हमें ज्ञान एवं चेतना प्राप्त हुई है। तुम्हें धर्म ज्ञान या काम कोई भी वरदान हम दे सकते हैं, बतलाओ क्या चाहते हो ?

देवताओं के ये भाव देखकर वे बोलें कि तुम लोग सत्यवादी हो अतः जो भी तुम मांगते हो वह सब होगा। अन्यथा कुछ नहीं होगा। तुमने अपने पुत्रों को अपना पिता कहा है। अतः वे

अतः तुम्हारे पिता ही हों। यही वरदान उन्हें दो। ब्रह्माजी के इस प्रकार कहने पर ऐसे ही हुआ और देवपुत्रगण पितृकोटि में आगये और उनके पिता पुत्र कोटि में आगये। इस तरह ये पितृगण (देवपुत्र) कहलाते हैं। वे पुत्र होने पर भी पितृभाव युक्त हैं। पुनः ब्रह्माजी ने वंश वृद्धि के लिये पितरों से कहा—

श्राद्ध कर्म में जो पितरों की पूजा बिना किये किसी अन्य क्रिया का अनुष्ठान करते हैं उनकी उस क्रिया का फल राक्षस और दानव प्राप्त कर लेते हैं श्राद्धों द्वारा सन्तुष्ट किये गये पितृगण अव्यय सोम को सन्तुष्ट करते हैं। तुम लोगों से सन्तुष्टि प्राप्त करके वे सर्वदा तुम्हें वृद्धि प्रदान करेंगे। श्राद्ध आदि में इस भांति सन्तुष्ट किया गया (पितरों द्वारा) वह सोम समस्त लोक, पर्वत, वन चराचर जगत सबको सन्तुष्ट करेगा। जो लोग लोक के पोषण की दृष्टि करेंगे उन्हें पितृगण सदा सर्वदा पुष्टि एवं सन्तान प्रदान करेंगे। श्राद्ध में आपके प्रपितामह तक का नाम एवं गोत्र का उच्चारण कर जिन पितरों को कुछ दे दिया जायगा, वे पितरगण उस श्राद्ध दान से अति सन्तुष्ट होकर देने वाले की सन्ततियों को सन्तुष्ट रखेंगे। परमेष्ठि ब्रह्मा ने यह आज्ञा पूर्वकाल में दी है उन पितरों की कृपा से ही दान, अध्ययन, तपस्वी सब में सिद्धि मिलती है इसमें कोई सन्देह नहीं करना चाहिये। पितरगण एवं देवता दोनों परस्पर में एक दूसरे के देवगण तथा पितरगण हैं।

ऋषिगण पूछने लगे—हे सूत! इन पितृगणों के कितने समूह कहे गये हैं। देवों के पूज्य तथा चन्द्रमा की पुष्टि करने वाले ये पितृेश्वर किस समय वर्तमान रहते हैं?

सूतजी बोले—हे ऋषियो! मैं आप लोगों से पितरों के उस श्रेष्ठ वंश का वृतान्त कहूँगा। जिसको प्राचीन काल में शंयु ने अपने बृहस्पति जी से पूछा था। एक बार शंयु ने पिता बृहस्पति जी से पूछा कि ये पितर कौन हैं! ये कितने और किस नाम वाले हैं! उनकी उत्पत्ति कैसे हुई! किस प्रकार इनको पितृत्व प्राप्त हुआ यज्ञ

में तथा किस कर्म आदि में पितरों की पूजा किस प्रकार और क्यों होती है ? श्रेष्ठ पुरुष सभी कार्यों को पितरों के श्राध्द के बाद समाप्त करते हैं ? ये श्राध्द अदि किसके उदेश्य से करने चाहिये । और इन्हें क्या प्रदान करने पर अधिक धन मिलता है। किन किन तीर्थों तथा नदियों में श्राध्द आदि करने पर अक्षय फल मिलता है। किन पवित्र क्षेत्रों में श्राध्द का विधान पूर्ण करने पर सभी मनोरथों को हम प्राप्त कर सकते हैं। कृपा यह सब क्रमशः बतलाने का कष्ट कीजिये। यह सुनकर बृहस्पति जी इस प्रकार कहने लगे।।

वृहस्पति ने कहा–हे श्रेष्ठ ब्राह्मण ! मैं तुम्हारे इन श्रेष्ठ प्रश्नों का उत्तर दे रहा हूँ। हे विप्र ! जिस समय सारे संसार में अधंकार था, आकाश, पृथ्वी, नक्षत्र, सूर्य चन्द्रमा, रातदिन कुछ भी नहीं थे, उस समय प्रजापति ब्रह्माजी अकेले ही अपनी तपस्या में लीन थे। शंयु ने अपने पिता वृहस्पति जी की इस प्रकार बातें सुनकर उनसे फिर कहा-हे पिता जी ! इस तरह की स्थिति में प्रजापति ब्रह्माजी किस तरह अपनी तपस्या में लीन रहे। वृहस्पति जी ने अपने पुत्र के इस प्रकार पूछने पर उससे कहा कि हे पुत्र ? योग सभी तरह के कठोर तप में श्रेष्ठ है। प्रजापति ब्रह्माजी ने योग से ही ध्यान में लीन होकर संसार की सृष्टि की थी प्रजापति ब्रह्माजी सभी अतीत और अनागत समय में होने वाली ज्ञान राशि, सारा संसार, समस्त वेदों की रचना, अपने योग के बल से ही की है जिस स्थान पर परम कान्तिमान सांतानिक नाम के लोकों की स्थिति है, उसी स्वर्ग लोक में वे देवताओं के भी राजा देवता वैराज नाम से पुकारे जाते वाले पितर गण रहते हैं। प्रजापति ब्रह्माजी ने सृष्टि के आदि काल में अपने सनातन योग से तपस्या में लीन होकर देवताओं की सृष्टि की थी, वे सभी देवगण आदि देव के नाम से प्रसिध्द हैं। वे आदि देव बहुत प्रभाव वाले बलशाली और तेजस्वी हैं

वे सभी मनुष्यों और दानवों के आदरणीय हैं तथा सभा की इच्छाओं को पूर्ण करने वाले हैं। त्रिलोकी में रहने वाले देवों के सात गण प्रसिद्ध हैं उन सात गणों में से तीन गण निराकार हैं और चार साकार हैं। निराकार देवगण सबसे ऊपर रहते हैं और जो चार साकार देवगण हैं वे उनके नीचे रहते हैं और फिर उनके नीचे साधारण देवता रहते हैं। इन सबके नीचे पृथ्वी बसी हुई है। इस प्रकार सभी लोक स्थित हैं। वे देव। इसी लोक में रहते हैं, उन्हीं देवताओं से बादलों की उत्पत्ति हुई हैं। बादलों से फिर वर्षा होती है और फिर वर्षा से सभी चीजें पैदा होती हैं।

पितर गण अपने योग बल से सोम और अन्न दोनों को सन्तुष्ट रखते हैं। विद्वान लोग उनको पूरे लोकों का पितर मानते हैं। ये पितर गण सम्पूर्ण इच्छाओं को पूरा करने वाले और सब तरह के आराम देने वाले हैं। तथा स्वधा को खाने वाले मन के समान वेग-शाली हैं। ये पितर गण लोभ मोह और भय से रहित हैं ये अपने योगाभ्यास के कारण प्रसिद्ध लोकों को प्राप्त हुए हैं। ये दिव्यगुणों से युक्त हैं श्रेष्ठ तथा पाप से रहित हैं ये पितरगण एक हजार वर्ष के बाद ब्रह्मवादी हो जाते हैं और फिर योग प्राप्त करके शरीर को त्याग कर मोक्ष प्राप्त करते हैं। वे रोजाना नियम पूर्वक गुरु की पूजा इत्यादि करते हुए अपने योगाभ्यास में लगे रहते हैं वे पितरगण योग मार्ग में इस प्रकार सबको तृप्त करते हैं, वे पितर गण श्राद्धों के समय में अपने योग बल से चन्द्रमा को तृप्त करते हैं। योग के तत्व जानने वालों को हमेशा श्रद्धा पूर्वक श्राद्धादिकों का दान करना चाहिए। श्राद्ध के समय पर आये हुए अतिथी ब्राह्मणों को श्रद्धा पूर्वक भोजन कराना चाहिए। योग बल में निपुण एक ही ब्राह्मण को भोजन कराने का फल हजारों ब्राह्मणों के भोजन कराने के फल के समान होता है।

हजारों ब्राह्मण, सौ स्नातक, एक हजार गृहस्थी सौ वान प्रस्थी तथा एक हजार ब्रह्मचारी इन सबसे बढ़कर एक योगाभ्यासी मनुष्य होता है। चाहे वे योगाभ्यासी संकीर्ण विचारों वाला तथा चोर ही क्यों न हो, चाहे नास्तिक हो वही सबसे बड़ा है। प्रजापति ब्रह्माजी ने कहा है कि योगी को छोड़ कर किसी और को दान नहीं देना चाहिए। जिस मनुष्य का पुत्र तथा पौत्रादि योगाभ्यासी मनुष्य को श्राद्ध के समय पर भोजन कराता है उस पितर गण इस प्रकार सन्तुष्ट होते हैं, जिस प्रकार कि अच्छी वर्षा होने पर किसान सन्तुष्ट हो जाते हैं। यदि श्राद्ध के समय पर योगाभ्यासी मनुष्य नहीं मिलता है तो दो ब्रह्मचारी ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिए, यदि किसी कारण वश वो भी न मिले तो किसी उदासीन ब्राह्मण को भोजन कराना चाहिए वह मनुष्य संसार के मोह माया जाल से विरक्त होना चाहिये। यदि ऐसा मनुष्य भी न मिले, तो किसी गृहस्थी को भोजन करवाना चाहिए। जो मनुष्य सौ वर्ष तक एक पैर पर खड़े होकर तपस्या करे उससे भी ध्यानीयोगी मनुष्य बढ़कर है। पृथ्वी पर सिद्ध मनुष्य ब्राह्मण का रूप रख कर घूमते रहते हैं। अतः मनुष्य को चाहिए कि किसी भी अतिथि के आजाने पर उससे हाथ जोड़कर आसन देकर उनका स्वागत करना चाहिए उसके रहने के लिए स्थान और भोजन की व्यवस्था करनी चाहिए। इस विशाल भू मण्डल पर ये देवगण अनेक रूपधारण करके रहते हैं और धर्म पूर्वक प्रजा का पालन करते हैं। इसलिए सभी मनुष्य अपने द्वार पर आये हुए अतिथी ब्राह्मण का अवश्य आदर करें। तेजस्वी पितरों के साथ गणों में यह प्रथम गण जिसका मैंने वर्णन किया है, सभी कालों की भावना करते हुये सदा वर्तमान रहता है। इसके बाद में सभी पितरों और उनकी सन्तानों तथा भावनाओं का क्रम से वर्णन करूंगा।

इति श्री वायु महापुराण का इकहत्तरवां अध्याय समाप्त (७१)।

—❀—

बहत्तरवां अध्याय

[श्राद्ध कल्प]

सूतजी बोले—हे ऋषियों ! पितृरीश्वरों के गण सात बताये गये हैं जो परम बुद्धिमान हैं। पितर गणों में चार तो मूर्तिमान हैं और तीन अमूर्त हैं। अब मैं उनके द्वारा लोक सृष्टि की रचना को कहता हूं सो ध्यान पूर्वक सुनो। उन की जो जो पुत्रियां तथा दौहित्रा हैं प्रथम उनका वर्णन सुनिये। विरजस नाम के विख्यात लोकों के मध्य में ब्रह्मा जी के पुत्र पिरज नाम के वितृीगण रहते हैं। जिनका वर्णन मैं कर चुका हूँ। इन्हीं विरजों की मानसी पुत्री मेना नाम वाली थी जो की हिमवान पत्नि थी। उससे मैनाक की उत्पत्ति हुई। यह मैनाक पर्वतों में श्रेष्ठ, रूपी रत्न एवं ओषधियों का आकार और पुष्पवान था। इसका पुत्र क्रौञ्ज नामक पर्वत था। पर्वतराज ने तीन कन्यायें अपर्णा, एकपर्णा और एक पाटला नाम वालियों को जन्म दिया था। इनमें अपर्णा ने कोई आश्रय नहीं बनाया बिना संबल के तपस्या में ही मन को लगा दिया। शेष दो ने आश्रम ग्रहण किया एकपर्ण ने एक न्यग्रोध (वरगद) के वृक्ष का तथा एक पाटला ने पाटल के वृक्ष का आश्रय लेकर तपस्यायें की। एक हजार वर्ष तक कठोर तपस्या की। इस प्रकार की तपस्या किसी देवता और दानव ने भी नहीं की थी इनमें जो एकपर्ण थी, वह सिर्फ एक पत्ते को खाकर तपस्या करती थी और एकपाटला सिर्फ एक पाटल पर ही तपस्या में लीन रहती थी। दो हजार वर्ष के बीत जाने पर इन दोनों बहिनों ने भोजन करना स्वीकार किया। हिमालय की तीसरी पुत्री अपर्णा ने भोजन करना अस्वीकार कर दिया और दो हजार वर्ष से अधिक भी बिना किसी आहार के तपस्या करती रही। उनकी मां ने अपने स्नेह और ममता से अति दुखीः होकर और तपस्या करने के लिए मना करते हुए उन्होंने 'उ' 'मा' नाम रख दिया। इस प्रकार कठोर तपस्या करने वाली भगवती अपनी मां के कहे अनुसार उमा नाम से तीनों लोकों में पुकारी जाने लगीं। वे भगवती उमा अपनी कठिन

तपस्या के कारण अपर्ण नाम से भी प्रसिद्ध हुई। जब तक यह पृथ्वी स्थिर है और संसार सत्ता जब तक स्थिर रहेगी तब तक इन तीनों कन्याओं के नाम उनकी कठिन तप के कारण रहेंगे। ये तीनों कन्याएं अपने योगबल से युक्त सुन्दर शरीर वाली सौभाग्यशालिनी और हर समय एक से यौवन वाली थीं इन तीनों कन्याओं में उमा सबसे श्रेष्ठ सर्वगुण सम्पन्न तथा सबसे अधिक सुन्दर थीं, इन्होने अपने योगबल और कठिन तप के कारण महादेव जी को पति बनाया इनके पुत्रों के ये नाम हैं। एक दन्त, कराय, उशन और भृगुनन्दन हैं। हिमालय की पुत्री एक पर्णा असित को ब्याही थी वह परम साध्वी और पतिव्रता स्त्री थी। हिमालय ने अपनी पुत्री एकपर्णा का विवाह अतिविद्वान योगाचार्य असित के साथ कर दिया। एकपर्णा ने ब्रह्मनिष्ठ देवल को मानस पुत्र के रूप में पैदा किया हिमालय की तीसरी कन्या एक पाटला का विवाह शतशिलाक के पुत्र जैगीषव्य के साथ हुआ और फिर उसके शंख और लिखित नाम के दो पुत्र उत्पन्न हुए, उन पुत्रों की उत्पति योनि से नहीं हुई थी। हिमालय की ये तीनों कन्याएं कल्याण दायक हैं इनमें सबसे अधिक भगवती उमा हैं। एक बार देवराज इन्द्र को उमा और शंकर जी के दाम्पत्य प्रेम को और आपस के सम्बन्ध को देख कर कुछ सन्देह हो गया, और इनके होने वाली सन्तान के भय से दुखी होकर उन्होंने अग्नि को उनके पास भेजा और कहा कि हे अग्नि देव ? तुम जाकर इन दोनों के रति कर्म में बाधा डालो, तुम तो सभी स्थानों पर जा सकते हो, तुम्हारे लिये कोई रोक टोक नहीं है। अतः तुम्हारे वहां जाने पर कोई दोष नहीं होगा। देवराज इन्द्र के ऐसा कहने पर अग्नि ने वैसा ही किया और फिर उसके परिणाम स्वरूप शंकरजी ने अपना वीर्य भगवती उमा के शरीर में न छोड़कर पृथ्वी पर गिरा दिया। हे शांशपायन ! इस प्रकार की स्थिति होने पर भगवती उमा को क्रोध आगया उन्होंने अग्नि को श्राप देदिया कि हे अग्नि ! तुमने मेरी तृप्ति किये बिना ही मेरी इस रति कर्म में जो बाधा

डालदी है, इस कारण तुम बहुत ही दुष्ट हो और जो रुद्र का महान तेजोमय वीर्य है उसे तुम गर्भ रूप में धारण करोगे, मैं तुमको श्राप दे ी हूँ ! हे ऋषियो । रुद्राणी उमा के क्रोध से श्राप के कारण अग्नि देव को गर्भ धारण करना पड़ा और वर्षों तक उन्होंने उस गर्भ के बोझ को सहन किया। कुछ दिनों के बाद फिर वे गंगा के किनारे आकर अग्नि देव ने गंगा जी से नम्रता पूर्वक कहा कि हे सुरसरि। तुम इस गर्भ को आज से धारण करलो, और मैं आशीर्वाद देता हूं कि तुम इसके बजन को कुछ कम हो दिनों तक धारण करोगी। तेज से जलते हुए उस गर्भ को धारण करने में गंगाजी को भी बहुत कष्ट हुआ। फिर भी वे उस गर्भ को धारण किये रहीं। इसके बाद हिमालय पर्वत की घाटी में शखण नाम का एक बहुत सुन्दर वन था। उस बन में बहुत से वृक्ष लगे हुए थे। उसी वन में जाकर गंगा जी ने अनुपम तेज से जलते हुए वीर्य को छोड़ दिया। रुद्र अग्नि और गंगा वह शिशु अरुण की तरह चमकता हुआ महान तेजस्वी और प्रतापी था। जाह्नवी के गर्भ से उस कुमार के पैदा होने के कारण सारा आकाश देवताओं से इस प्रकार ढक गया कि मालूम पड़ता था कि पक्षीगणों के समूह आकाश में उड़ रहे हों। चारों तरफ से गन्धर्व और अप्सरायें नाच गान करने लगे, सिद्ध, किन्नर, विद्याधर चारण फूलों की वर्षा करने लगे और उत्सव मनाने लगे। बड़े बड़े विशाल नाग शंकरात्मज अग्निसम्भव कुमार की पूजा करने लगे। उस परम तेजस्वी कुमार ने अपने अनोखे प्रभाव से ही दैत्यों, दानवों तथा राक्षसों को युद्ध में हरा दिया। जो इस उत्सव में सप्त ऋषियों की पत्नियों की पत्नियां आई थीं, उनमें से अरुन्धती जी को छोड़कर सबसे पहले उस अग्नि सम्भव कुमार का दर्शन किया। रुद्र के महान तेजोमय, परम ऐश्वर्य शाली, बाल सूर्य के समान कान्ति वाले पुत्र को उन ऋषियों की पत्नियों ने चारों तरफ से घेर लिया।

माता के समान स्नेहमयी आंखों से देखने लगीं, तब अग्नि सम्भव कुमार ने उन सबको खुश करने के लिए जाह्नवी के पुत्र ने छः मुख को बना लिया, उस समय वे बहुत सुन्दर लग रहे थे। उस कुमार के पैदा होते ही दानव भयभीत हो गये। उस समय उसका नाम (स्कन्द) पड़ा। वह स्कन्द कृत्तिकाओं द्वारा पोषण किया गया, इसलिए उसका नाम कार्तिकेय हुआ। भगवान विष्णु ने इनकी सवारी के लिए गरुड़ से भी प्रभावशाली दो प्रभद्रक नाम के मयूर और कुक्कुट पक्षियों को उत्पन्न किया। वायुदेव ने उन्हें पताका दी। सरस्वती ने सुन्दर शब्द करने वाली बहुत बड़ी वीणा दी। ब्रह्माजी ने अज दिया और शंकर भगवान ने एक मैढ़ा दिया। तारकासुर को समस्त सेना के साथ संहार कर देने के बाद इन्द्रादिक सभी देवताओं ने, शिव के भूतगणों ने, मातृकाओं ने, विनायकों ने इनका नर नायक, देव सेनापति, स्कन्द सर्व लोकेश्वर एवं प्रभु आदि नामों से अभिनन्दन किया।

इति श्री वायु महापुराण का श्राद्ध कल्प नामक बहत्तरवां अध्याय समाप्त हुआ ॥७२॥

—❀—

तिहत्तरवां अध्याय

[श्राद्ध कल्प]

बृहस्पति जी कहने लगे—स्वर्ग में जो सोमपद नाम का लोक है, वहीं पितरों का निवास स्थान है, देवता वहां पर उनकी पूजा किया करते हैं। वे पितरगण अग्निष्वात्त नाम से पुकारे जाते हैं। आच्छोदा नाम की जो नदी है वह पितरों की मानसी कन्या कहलाती है। आच्छोदा नाम की नदी से निकला हुआ एक आच्छोद नामका बहुत बड़ा सरोवर भी है। उसी सरोवर के किनारे एक समय सभी देवता अद्रिका नाम की अप्सरा के साथ आकाश में विमानों पर विहार कर रहे थे, तभी उस अप्सरा ने मूर्ति रहित पितरों को देखा और अत्यन्त आश्चर्य करने लगे, फिर पितरों पर मोहित काम से

पीड़ित हुई। उसने आकाश में घूमते हुए वसुओं के पिता दीर्घायु ऐश्वर्यशाली अमावसु नाम के पितर को अपने पति बनाने की इच्छा से उसको मन ही मन में वरण कर लिया और इस मानसिक वरण के कारण तथा अमावसु को पति के रूप में मानने की कामना से वह कामचारिणी योगभ्रष्ट हो गई। जब वह स्वर्ग लोक से पतित हो गई। जब वह स्वर्ग से पतित होकर नीचे गिरी तो गिरते समय उसने देवताओं के विमानों के साथ साथ वहां त्रसरेणु के समान बहुत छोटे रूप में उन पितरों को देखा। वे पितर बहुत छोटे थे तथा अग्नि के समान चमकचे हुए तेजस्वी थे। उसने आकाश से गिरते समय दुःखी शब्दों में कहा कि मेरी रक्षा करो। पितरों ने आरत वाणी सुनकर उससे कहा कि-'डरो मत' उनके ऐसा कहने से वह अप्सरा वहीं पर स्थिर हो गई और स्थिर होकर अति दुखी वाणी से पितरों की आराधना की और उनको प्रसन्न किया। अपने मानसिक भावों से भ्रष्ट होने के कारण इस कन्या को देखकर पितरों ने उससे कहा कि, हे सुन्दर हंसने वाली। तू अपने ही दोषों के कारण अपने ऐश्वर्य से भ्रष्ट होकर गिर रही है। इस लोक में देवता अपने जिस शरीर से कर्मों को करते हैं, उसी से उसका फल प्राप्त करते हैं। देवयोनि में कर्मों का फल शीघ्र ही मिलता है। मनुष्य योनि में अपने किये हुए कर्मों का फल परलोक में मिलता है। तुम इसी कारण दूसरे जन्म में अमावसु को अपने पति रूप में प्राप्त करोगी। इस प्रकार कहने के बाद उसने पितरों की पुनः प्रार्थना करके प्रसन्न किया। पितरों ने उस कन्या पर प्रसन्न होकर उससे कहा कि सोम के पीने वाले पितरों ने राजा रूपमें अमावसु को और उसकी कन्या के बारे में ये बातें की। पृथ्वी पर मनुष्य योनि में तुम अमावसु की कन्या बनोगी, और पुनः अपने लोकों को प्राप्त करोगी। अठाइसवें द्वापर युग में तुम मत्स्य की योनि में राजा अमावसु से अद्रिका में तुम कन्या रूप में जन्म लोगी, और पराशर ऋषि के पुत्र वेदव्यास को पैदा करोगी। तुम्हारा वह पुत्र सभी ब्राह्मणों में श्रेष्ठ होकर वेदों

को चार भागों में विभक्त करेगा । राजा शान्तुन के ऐश्वर्य शाली धर्मपरायण दो पुत्र विचित्र वीर्य और चित्रांगद भी तुम्हीं से जन्म लेंगे । तुम इन पुत्रों को पैदा करने के बाद पुनः इसे लोक को प्राप्त करोगी । तुमने पितरों के साथ ऐसी कुभावना पैदा करके बहुत भारी अपराध किया है और इसी कारण तुमको ऐसी नीच योनि में जन्म प्राप्त करना पड़ेगा । लेकिन तुम उस योनि में भी अद्रिका के गर्भ से और उसी राजा के वीर्य से जन्म लोगी । उनकी कन्या होने के बाद तुम इस लोक को अवश्य ही प्राप्त करोगी ।

इस प्रकार के कहने पर वह दासों की पुत्री सत्यवती हुई । राजा अमावसु के सम्भोग से अद्रिका नाम की मछली के गर्भ से कन्या रूप में जन्म हुआ । गंगा मनुष्य के संगम पर अद्रिका मछली के पेट से उसका जन्म हुआ । वह अमावसु के वीर्य से पैदा हुई थी । अतः वह उन दोनों की कन्या थी । स्वर्ग लोक में विरज नाम के पितर गण निवास करते हैं वहाँ पर रहने वाले पितर गण सूर्य के तेज के समान कान्तिमान हैं। वे पितर अग्निष्वात्त नाम से प्रसिद्ध हैं । सभी लोग दानव, यक्ष, किन्नर, राक्षस भूत, पिशाच, सर्प, गन्धर्व अपने उत्तम फल को पाने की इच्छा से पितरों की पूजा करते हैं । मैंने आपको पुलह प्रजापति के पुत्रों का वर्णन सुनाया है । इन धर्म मूर्ति पितरों के तीन गण प्रसिद्ध हैं, इनकी एक मानसी कन्या थी, जो पीवरी के नाम से प्रसिद्ध है. वह कन्या पीवरी योगिनी, योग पत्नि और योग माया के नाम से भी पुकारी जाती है । हे श्रेष्ठ ब्राह्मणों ! अठाइसवें द्वापर युग में पराशर ऋषि के वंश में शुक नाम के महान तेजस्वी योगी जन्म लेंगे । वे ही पृथ्वी पर योग का विस्तार करेंगे । वे शुक व्यास जी के संयोग से अरणी में धूम रहित अग्नि के समान तेजोमय रूप में पैदा होंगे, और पितरों की जो मानसी कन्या पीवरी है उससे, कृष्ण, गौर, प्रभु शंभु, तथा भूरिश्रुत नाम के पुत्र तथा परम योगिनी योगमाता कीर्तिमती नाम की कन्या पैदा होगी

वह कीर्त्तिमती अणुह की पत्नि होकर एक पुत्र ब्रह्मदत्त को पैदा करेगी। महात्मा शुकजी इन पुत्रों को पैदा करने के बाद अपने तप और योग से उस परम गति को प्राप्त करेंगे। जिसको प्राप्त करके दूसरा जन्म नहीं लेना पडता।

धर्म मूर्त्ति धारण करने वाले पितर गण हैं वे अमूर्त हैं, उनके तीन गण प्रसिध्द हैं। हे श्रेष्ठ ब्राह्मणो? अब मै आपको दूसरे चार पितरों के विषय में बतलाऊंगा, वे परम तेजस्वी रूप धारी हैं। वे पितरगण अग्नि की कन्या स्वधा से पैदा हुए हैं। ज्योतिष्मसि नाम के देव लोकों में निवास करते हैं। इन पितरों की मानसी कन्या गौ है, वह कन्या स्वर्गलोक में प्रसिध्द है। सनत्कुमार ने गौ शुक्र को दे दिया, और तब वह गौ शुक्र की प्यारी स्त्री हुई।

भृगुवंश में पैदा होने वाले इकत्तीस पितरगण प्रसिध्द हैं, वे मरीचि गर्भ नाम के लोकों में निवास करते हैं। वे लोक समस्त स्वर्ग लोक को घेरे हुए अंगिरा के पुत्र कहे जाने वाले पितर गण साध्य नाम से प्रसिध्द हुए। स्वर्ग लोक में परम तेजस्वी उपहूत नाम के पितर गण निवास करते हैं। मनुष्य अपने शुभ फल के प्राप्त की इच्छा मे उन पितर गणों की पूजा करते हैं। इनकी एक मानसी कन्या है जो यशोदा नाम से प्रसिध्द है। यशोदा नामकी मानसी कन्या विश्वमहत् की स्त्री है, और विश्वशर्मा के पुत्र की स्त्री है। और उस महात्मा राजर्षि खटवांग की माता थी। प्राचीन काल में जिससे यज्ञ में दिव्यगुण सम्पन्न महर्षिगों ने वेदों का गान किया है, स्वर्ग को जीतने वाले वे सम्पूर्ण पितर गण प्रसन्न चित्त यज्ञ में अग्नि को देखने के बाद महात्मा शाडिल्य के सत्यव्रत परायण और महात्मा यजमान दिलीप का दर्शन करते हैं। उनके नाम आज्यपा हैं, ये प्रजापति कर्दम के पितरगण माने जाते हैं। ये पुलह से पैदा हुए थे, और उन्हीं के यहां इनकी पुनः उत्पत्ति हुई। ये अकाश में घूमने वाले पितरगण अपनी इच्छानुकूल विहार करते हैं। वैश्यगण श्राध्दों में अपनी इच्छानुसार शुभ फल की प्राप्ति से इनकी पूजा करते हैं। एक मानसी कन्या है, वह विरजा नाम से प्रसिध्द है।

वह विरजा नाम की कन्या महात्मा नहुष की प्यारी पत्नि और ययति की माता हुई ।

प्रजापति वशिष्ठ के सुकाल नाम के पितृगण हैं, वे पितृगण हिरण्यगर्भ के पुत्र हैं, शुद्र जाति के मनुष्य इन पितरों की पूजा करते हैं । ये पितर गण स्वर्ग में मानस नामके लोकों में निवास करते हैं । इनकी भी एक मानसी कन्या हैं जो नदियों में श्रेष्ठ नर्मदा के नाम से प्रसिद्ध हैं । वह नर्मदा नदी भारत के दक्षिण हिस्से में बहती हुई सभी जीवों को पवित्र करती है वह नर्मदा पुरुकुत्स की स्त्री थी और त्रसदस्यु की माता थी । इन्हीं सब पितरों के कारण मनु मन्वन्तर के स्वामी हैं । और मन्वन्तर के आदि काल में सभी प्रकार के श्राद्धों का आदान प्रदान करते हैं ; हे विप्रगणो मैंने आप लोगों को सम्पूर्ण पितरों का वर्णन क्रम से सुनाया है । इन्ही सब कारणों से मनुष्य को इस लोक में अपने धर्म के अनुसार श्रद्धापूर्वक श्राद्ध कर्म करने चाहिए । चांदी के या मिले हुए चांदी के बर्तनों में रख कर पितरों के उद्देश्य से पुरोहित को दी गई स्वधा पितरों को प्रसन्न करती है । सोम, अग्नि, सूर्यपुत्र मनु को स्वाधादि से खूब सन्तुष्ट करके तथा सूर्य के उत्तरायण होने पर अग्नि में हवन इत्यादि करके अश्वमेधयज्ञ में फल के समान प्राप्ति होती है । जो श्रद्धा पूर्वक पितरों को श्राद्धइत्यादि से प्रसन्नर खता है वह सदा सुखी और सन्तुष्ट रहते हैं । पुत्र पौत्रों की इच्छा रखने वालों के पितर गण उनको वृद्धि, प्रजा और धन स्वर्ग को प्रदान करते हैं । पितरों के निमित्त श्राद्ध इत्यादि कर्म करने का फल देवताओं के निमित्त यज्ञ इत्यादि कर्म करने के फल से अधिक होता है । पुराणों में ऐसा प्रसिद्ध है कि देवताओं से पहले पितरों को प्रसन्न करना चाहिए । इन पितरों में चार मूर्तिधारी हैं और तीन अमूर्तधारी पितरगण है । देवता लोग प्रत्येक यज्ञ से आदर पूर्वक उन सब का श्राद्ध करते है । इन्द्र इत्यादि सभी देवगण अपने मन लगाकर श्रद्धापूर्वक श्राध्दादि कर्म करते हैं । इनके साथ सभी विश्वेदेवगण, पृश्निज अंगिन

कृष्ण, श्वेत, अज इत्यादि भी इन पितरों की आराधना करते हैं। वातरशन, दिवाकीर्त्य नाम की प्रजायें, लेखा, मरुत, ब्रह्मा इत्यादि देवता भी इन पितरों की पूजा करते हैं। मनुष्यों के समस्त मनोरथों को ये पितरगण पूरा करते हैं। ये सभी पितर गण मनुष्यों को धन, आयुः, बल, ऐश्वर्य, तीनों लोक को देने वाले हैं। संसार के सभी दुख मृत्यु इत्यादि के भय को छोड़कर मोक्ष, योग को देने वाले कहलाते हैं। ये सूक्ष्म धारी पितर गण मोक्ष को प्राप्त करने योग ऐश्वर्य देते हैं, योग ही सबसे अच्छा है सबसे अच्छी सम्पत्ति ऐश्वर्य है, योग और ऐश्वर्य के बिना मोक्ष की प्राप्ति नहीं हो सकती है जिस प्रकार आकाश में पक्षी बिना पंख के नहीं उड़ सकता है, उसी प्रकार योग और ऐश्वर्य के बिना मोक्ष भी नहीं प्राप्त हो सकता है। सभी धर्मों में मोक्ष ही सर्व श्रेष्ठ धर्म है और ये सदा विद्यमान रहता है। ये पितर गण अप्सराओं से घिरे हुए सैकड़ों विमानों को देने वाले हैं। ये पितरगण सभी इच्छाओं को पूर्ण करने वाले हैं। ये पितरगण धन, धान्य, दीर्घायु, सुख, राज्य, शांक्त बुद्धि के देने वाले हैं। ये पितरगण वैदूर्य, मोती, मुक्ता, नाना तरह के वस्त्र हाथी, घोड़े, नाग, करोड़ों रत्न, हंस, और बर्हियों से सजे हुए मुक्ता और वैदूर्य से सजे हुए, किंकिणी के जालों से गुंथे हुए फल फूलों से सजे हुए रथ को प्रसन्न पूर्वक देने वाले हैं।

श्री वायु महापुराण का उपोदघात पादे श्राद्ध कल्प नामका
तिहत्तरवां अध्याय समाप्त हुआ।

चौहत्तरवाँ अध्याय

[श्राद्ध कल्प]

बृहस्पति बोले—पितरों के लिए चांदी, सोने और तांबे के बने बर्तनों का दान बताया है, चांदी का वर्तन हो अथवा चांदी से मढ़ा हुआ वर्तन भी ठीक है। चांदी का दान हो, यदि चांदी न हो सके तो उसको देखने से अथवा उसका नाम लेने से भी पितरों को अनन्त अक्षय और स्वर्ग देने वाला दान कहलाता है। अपने पिता के सुयोग्य

पुत्र चांदी के इस दान से अपने पितरों का उद्धार करते हैं। हे तात पुराने समय में स्वधा देने वाले पितरों ने चांदी ने बर्तनों में स्वधा का दोहन किया था। अतः इसी कारण से उसका दान अथवा चांदी के बने वर्तन में दान करने पर अक्षय फल की प्राप्ति होती है। काले मृगचर्म का सान्निध्य, दर्शन और दान करना भी राक्षसों का नाश करने वाला तथा ब्राह्मतेज को देने वाला है। पितरों के निमित्त श्राद्धादि कर्म में सौने के बने हुये, चांदी के, तांवे, लोहे के वर्तन, कुतपतिल, वस्त्र तथा और दूसरी पवित्र वस्तुएँ मन वचन कर्म से दान करनी चाहिए। इस प्रकार विधिपूर्वक जो वस्तुओं का दान करता है उस श्राद्ध करने वाले व्यक्ति को आयु, यश, प्रजा बुद्धि, सन्तान इत्यादि प्राप्त होते हैं। दक्षिण और पूर्व की दिशा में श्राद्ध करने का विधान माना जाता है। सब जगह अरत्नि मात्र परिमाण होना चाहि ए तथा चौकोर सुन्दर स्थान होना चाहिए। श्रध्दा पूर्वक पितरों के निमित्त श्राद्ध करने से धन, आयु, आरोग्य साधक, बल, विद्या बुद्धि तथा वर्ण की वृद्धि होती है। पितरों के निमित्त श्राध्द के स्थान में तीन गढ़े बनाने चाहिए, जिनका विस्तार एक मुठी बंधे हुए हाथ के समान होना चाहिए, वह स्थान चांदी से सजा हुआ होना चाहिए इसके बाद खदिर के डंडे भी होते हैं, वे डडे वित्ते भर लम्बे हों, और उनके चारों तरफ चार चार अंगुल के वेष्ठन बने हों, उनको पूर्व और दक्षिण के मुख भाग की तरफ से पृथ्वी पर रखे जाने चाहिए, उन डन्डो को शुध्द जल से धोने चाहिये। इस के बाद फिर उन डडों को बकरी के दूध तथा जल से दुबारा धोने चाहिये। इस प्रकार विधि पूर्वक तर्पण करने से सभी पितरों की तृप्ति होती है। इस तरह विधि पूर्वक श्राध्द इत्यादि कर्म करने वाले व्यक्तियों को इस लोक और पर-लोक में सुख और शान्ति मिलती है। इसी तरह जो तीन बार सशरीर स्नान करके विधि पूर्वक मंत्रादि द्वारा सदा पितरों की पूजा करते हैं, वे व्यक्ति अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त करते हैं।

अमावस्या के दिन श्राद्ध को उपयोगी सभी वस्तुओं को पृथ्वी पर चार अंगुल गढे बना कर रखनी चाहिये। ये त्रिःसप्तयज्ञ के नाम से प्रसिद्ध हैं, और इन्हीं पर त्रैलोक्य स्थित है। जो मनुष्य इस प्रकार इसका अनुष्ठान करता है, उसको धन, यश, ऐश्वर्य, बुद्धि, विद्या सन्तान तथा प्रचुर लक्ष्मी और लक्ष्मी की क्रम से प्राप्ति होती है। ब्राह्मणों के द्वारा पूजित, समस्तपापों का नाश करने वाला, अश्वमेध यज्ञ का फल देने वाला एक मन्त्र इस प्रकार है—

"देवताभ्यः पितृभ्यश्च महायोगिभ्य एव च।
नमः स्वधायै स्वहायै नित्य मेव भवन्त्युत॥"

श्राद्ध के प्रारम्भ करते समय, समाप्त करते समय, पिण्डदान करते समय इस मन्त्र का एकाग्र चित्त से पाठ करना चाहिये। और इसे तीन बार पढे। इससे पितृश्वर वहां आते हैं और राक्षस गण भाग जाते हैं। तीनों लोकों में इससे पितृगण प्रसन्न होते हैं और उनका उद्धार होता है। एक और मन्त्र निम्न प्रकार है जो बल वीर्य लक्ष्मी आयु को बढ़ाने वाला और सभी शुभ फल दायी है—

अमूर्तानां समूर्तानां पितृणां दीप्ततेजसाम्।
नमस्यामि सदातेभ्यो ध्यानिभ्यो योगचक्षुषः॥ आदि ...

सप्त ऋषियों और ब्रह्मर्षियों आदि के द्वारा पूजित, श्रीसम्पन्न राक्षसों के नाश करने वाले इस स्तोत्र को मैंने आपको सुनाया और आपने सुना। विधि समेत श्राद्ध करने पर मनुष्य अन्न दीर्घायु और पुत्र (ये तीन वस्तुऐं) प्राप्त करते हैं। जो श्रद्धा भक्ति पूर्वक जितेन्द्रिय होकर इस 'सप्तर्षिष' स्तोत्र का पाठ करता है, वह सातद्वीपों वाली और समुद्रों वाली समस्त पृथ्वी का एक छत्र सम्राट बनता है। अपने घर में तैयार किये हुये पदार्थों को पितृगणों को निवेदित किये बिना ग्रहण नहीं करना चाहिये। अब मैं बलि कर्म के बारे में बताऊंगा। अब बलिकर्म के द्वारा जो फल मिलते हैं उनको कहता हूं। उसे सुनिये।

इति श्रीवायुपुराण का श्राद्ध कल्प नामक चौहत्तरवां अध्याय समाप्त।७४।

—❀—

पिचहत्तरवां अध्याय

[श्राद्ध कल्प]

बृहस्पति जी बोले—पीपल के पत्तों से बने हुए बर्तनों है राज्य की भावना बतलाई जाती है, और पलश के पत्तों से बने हुए बर्तनों में बलिदान इत्यादि करने से ब्रह्म तेज प्राप्त होता है। इसी तरह प्लक्ष के पत्तों से बने बर्तनों में सभी जीवों का अधिकार प्राप्त होता है ऐसा कहा जाता है। खम्भारी के पत्तों से बने हुए बर्तनों में बलि कर्म करने से राक्षसों का नाश होता है। बरगद के पत्तों से बने हुए बर्तनों में बलिकर्म करने से सन्तान, बुद्धि, प्रजा और स्मरण शक्ति प्राप्त होती है। महुए के पत्तों से बने हुए बर्तनों में बलिकर्म करने से उत्तम सौभाग्य मिलता है। कठूमट के पत्तों से बने बर्तनों में बलिकर्म करने से उस बलिकर्म करने वाले व्यक्ति को सुख, शक्ति और लक्ष्मी प्राप्त होती है तथा उसके सभी मन इच्छित वस्तुएं प्राप्त होती हैं। बिल्व के पत्तों से बने हुए बर्तनों में बलिकर्म करने से धन, ऐश्वर्य, बल और दीर्घायु प्राप्त होती है। वेणु के पत्तों से बने हुए बर्तनों में श्राद्ध करने से मनुष्य के खेत, बगीचे और छोटे छोटे तालाबों में मेघ नित्य वर्षा करता है। जो मनुष्य इन बर्तनों में श्राद्ध करते हैं अथवा श्राद्ध के समय पितरों को एक बार भी बलि देते हैं उस श्राद्ध करने वाले व्यक्ति को सम्पूर्ण यज्ञों का फल प्राप्त होता है। जो व्यक्ति श्रद्धा पूर्वक पितरों को फल फूल, माला धूप दीप इत्यादि से पूजा करता है उसे पितर सुख, शान्ति, धन, आरोग्य प्रदान करते हैं। धूप और गुगुल को घी और शहद से मिला कर जो पितरों को अर्पित करते हैं। वे अश्वमेध यज्ञ का फल पाते हैं। जो मनुष्य सुगन्धित धूप पितरों को दान करता है वह इस लोक में तथा परलोक में अपनी पत्नि में श्रेष्ठ सन्तान को प्राप्त करते हैं। इसलिए आलस्य को त्याग कर पितरों को नित्य धूप दान करना चाहिए। पितरों को नित्य दान करने से अत्यन्त सुन्दर नेत्र, तेज, यश, कान्ति, बल, और पृथ्वीतल में प्रसिद्धी प्राप्त होती है और अन्त में

स्वर्ग लोक को प्राप्त कर अप्सराओं के साथ विमान में विहार करता है। नित्य गन्ध, पुष्प, घी आहुति फल, फूल और नमस्कार से जितेन्द्रिय होकर पितरों को तृप्त करना चाहिये और उसके बाद यथा शक्ति ब्राह्मणों की पूजा करनी चाहिये, क्योंकि श्राद्ध के अवसर पर पितरगण वायु का रूप धारण करके उन ब्राह्मणों में प्रवेश करते हैं। इसीलिए मैंने उनके भोजन कराने की बात कही है। ब्राह्मणों सत्कार करने से पितर प्रसन्न होते हैं। इसीलिए वस्त्र, अन्न, दान, भक्ष्य, पेय गाय, घोड़ा और ग्राम इत्यादि का दान देकर ब्राह्मणों का की पूजा करनी चाहिए। श्राद्ध कर्म में ब्राह्मणों को चाहिए कि सभी उपस्थित ब्राह्मणों को सन्तुष्ट करके वैश्य देव कर्म करे, उसके बाद तेल मर्दन, कुश, और पिंजल इन तीनों से विधि पूर्वक क्रियायें करे, फिर अपसव्य होकर पितरों को उत्तम अन्न प्रदान करे। उनका नाम लेकर वस्त्र के लिये सूत्र का दान करे। खड़न, पेषण और उल्लेखन पितरों के लिये तीन बार करना चाहिये और देवताओं के लिये इनका एक बार के लिये विमान है। मन्त्र द्वारा सभी पितरों को वस्त्र दान पिण्डों के ऊपर करके दर्शन करने से कल्याण होता है।

पितरों में भक्ति रखने वाला आलस्य छोड़कर बायें घुटने को पृथ्वी में टेक कर और अपसव्य होकर पितरों के जल से पिता पितामह प्रपितामह और अन्य पुराने पितरों का आवाहन कर पिरड़ों को नीचे रखे। कुछ लोग अन्न, जल, पुष्प आदि अनेक भिन्न प्रकार के पदार्थों से मातृ पक्ष के लिये पिण्ड दान का अलग विधान मानते हैं। "नमो वः पितरः शुष्मै" मन्त्र को बोलकर अँगूठे के सहित पुष्टि करने वाले तीन पिण्डों को घुटना पृथ्वी पर टेककर बायें हाथ से प्रदान कर देना चाहिए।

इसके बाद नमो वः पितरः सौम्याः" ऐसा मन्त्रोच्चारण करके दक्षिण दशा में प्रथम पिण्डदान करे। फिर बायें हाथ से शुद्ध किये हुए चावल, जलपान से जल नवीन क्षौम वस्त्र, कपास का सूत, रक्त वस्त्र पितरों के उद्देश्यसे दान करे। किन्तु ऊन और रेशम का सूत पितरों

नये वस्त्र का ही क्यों न हो परन्तु आंचल भाग को यज्ञ में वर्जित माना गया है। पितृ कार्य में त्रिकुद, अंजन तथा काले तिलों का तेल शुभ और प्रशंसनीय है। चंदन, अगरु, तमाल, उशीर, पद्मक धूप, गुग्गुल श्रेष्ठ तुरुष्क (लोबान की धूप) श्वेत फूल, ये सभी वस्तुयें पितृ कार्यों में श्रेष्ठ होती हैं। इसके अतिरिक्त अन्य सुगन्धित वस्तुयें तथा उत्पल, पद्म, आदि भी शुभ हैं। जपा, भण्डीर, अपकाम एवं कुरण्डक के पुष्पों को श्राद्धकार्य में सदा निषेध किया गया है। कल्याण चाहने वाले व्यक्तियों को निर्गन्ध अथवा अत्यन्त क्षीण गन्ध वाले पुष्पों का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

श्राद्ध के कार्यों में यजमान को दक्षिणाभिमुख होकर विधि पूर्वक उत्तराभिमुख बैठे ब्राह्मणों का पूजन करे। उनके सामने विधि-पूर्वक पिण्ड तथा कुश रखे। पुष्प तथा सीधी सरल पिंजलियां रखे। पितरों के तीर्थों से रत्नदान करने पर पितृगण परम प्रसन्न होते हैं। सूत्र के समीप में नील वर्ण की, पत्थर कँकड़ी से रहित सांवां और नीवार ये दोनों भी पितृकार्य में श्रेष्ठ कही हैं। इस सम्बन्ध में प्राचीन कथा इस प्रकार कही गई है। आकाशमार्ग से प्रजापति के केश एक बार गिरे। वे पृथ्वी पर काश रूप में बदल गये। इसीलिये काश को श्राद्ध कार्य में पवित्र माना गया है। काश पर रखकर पिण्डदान करने से वैभव, यश, प्रजा की पुष्टि, शरीर की कान्ति बुद्धि शोभा आदि का वृद्धि होती है। बुद्धिमान पुरुष को चाहिये कि वह कभी भी दीन हीन या अनमनेपन से श्राद्ध न करे। सदा एकाग्र चित्त से श्राद्ध करना चाहिये। वह मन में ऐसा पवित्र विचार रखे कि मैं अपवित्र अनियमित वस्तुओं का निवारण कर रहा हूँ तथा विघ्न कारक असुर एवं दानवों का भी नाश कर चुका हूँ। मन्त्र के द्वारा कुश से वेदी को काढ़कर कल्याण की इच्छा करता हुआ उत्तर की ओर फैंकदे। ऐसा करने से असुरगण वहां नहीं भटकते। जहां इस प्रकार मन्त्र पढ़ा जाता है वहां से राक्षस गण भाग जाते हैं। पवित्र हाथों से जो अन्नदान करता है। वह हजार गुना फल प्राप्त करता है। अशुचि व्यक्ति को दान तो क्या उस अन्न का दर्शन भी नहीं करना चाहिए।

ऐसा करने से पितृगण सभी मन की दशाओं को समझ कर उन्हें पूर्ण कर देते हैं। अतः नित्य नियम पूर्वक श्राध्द सम्पन्न करना चाहिये। श्राध्द कार्य में रुद्र क्षीरचारु, वल्वज, तरु, वारण, लव, लव-वर्ष तथा अन्यान्य तृण एवं अंजन अभ्यजन गन्धमानुपलपन आदि सभी वर्जित हैं। श्राद्ध कार्य में वर्हण उप वर्हण और स्वयं उत्पन्न होने वाले तृण उपयोगी होते हैं। अथले पितरो देवा देवाश्च पितरः पुनः अर्थात् पितृगण ही देवस्वरूप है और देवगण ही पितर स्वरूप है। यह मन्त्र पितरों को पुष्प सुगन्धि द्रव्य धूप आदि का दान करते समय का है।

हवन के लिए रखी गई सामग्र को दक्षिण दिशा में रखकर लौकिक विधि से कर्म सिध्दि के लिये हवन कर। समिध को भीतर रखकर हवन करना चाहिए। यजमान अग्नि की पूजा करके एकाग्र चित्त से हवन करे।

अग्रये कव्यवाहाय स्वधा अंगरसेनमः। सोमाय वै पितृमते स्वधा अंगिरसे नमः। यमाय चैवांगिरसे स्वधा नमः। ऐसा बोलना चाहिए। ये हवन करने के मन्त्र हैं। इन मन्त्रों में क्रमशः दक्षिण दिशा में अग्नि के अनन्तर सोम के इन दिनों के मध्यभाग में विवस्वान के (यम के) उद्देश्य से हवन करना चाहिए। उपकार स्वधाकार उल्लेखन हवन जप नमस्कार प्रोक्षण अंजन अभ्यंजन पिण्ड निवर्तन आदि ये सभी कार्य मन्त्र बोलकर करने से अश्वमेध यज्ञ का फल प्रदान करने वाले बतलाये गये हैं। श्राद्धों को यथा विधि यत्न पूर्वक करना चाहिये अग्नि जब खूब प्रज्वलित हो जाय तब हवन करना चाहिये। जो यजमान धूँआ में ही या बिना अग्नि प्रज्वलित किये हवि छोड़ता है वह अन्धा होता है अथवा पुत्र विहीन होता है। ऐसा कहा गया है। थोड़े ईंधन वाली रूखी चारों ओर ज्वाला तथा चिनगारियों वाली अग्नि अथवा धूँआ वाली अग्नि सिध्दि प्रदान नहीं करती है। नीली काली या दुर्गन्ध अग्नि से पृथ्वी फटजाय तथा उसमें हवन करने पर पराभव जानना चाहिये।

किरणों से सुशोभित एक पिण्डाकार ज्वालाओं से युक्त घी और सुवर्ण के रंग वाली (पीली) स्निग्ध तथा प्रदक्षिणा करने वाली अग्नि सिद्ध कही गई है। यह अग्नि सदा इस लोक में नर नारी द्वारा पूजी जाती है। इनके द्वारा पूजित पितृगण अक्षय और अनन्त सन्तुष्ट होते हैं। श्राद्ध में स्थाली और गू र के पात्र तथा समिधायें और फल विशेष फलदायक माने गए हैं। हे ब्राह्मणो! जो जो फल मैंने श्राद्ध में श्रेष्ठ कहे हैं वे ही जातकर्म में भी श्रेष्ठ हैं समिधा भी इसी प्रकार जाननी चाहिए। श्राद्ध करने वाले को एकाग्र चित्त से सावधान होकर ब्राह्मणों से पितृकार्य करने की आज्ञा तथा अग्निकार्य की भी आज्ञा माननी चाहिए। उत्तम द्विजों से "ऐसा करो" यह आज्ञा प्राप्त हो जाने पर समतीक और पुत्रों सहित हवन करना चाहिए। पीपल पाकर, बरगद, विकंकत, गूलर, बेल, चन्दन ये सभी वृक्ष यज्ञ कार्य में श्रेष्ठ और उपयोगी माने गए हैं। सरल, देवदारु, शाल, खदिर ये वृक्ष भी समिधा के लिए श्रेष्ठ हैं। गाँवों में होने वाली कण्टकी (कटेहरी) के वृक्ष भी समिधा का कार्य दे सकते हैं। ऐसी पितरों की आज्ञा है। कलकल की समिध से हवन करने पर अनन्त फल की प्राप्ति होती है। आपस की समिधा सभी मनोरथों को पूर्ण करने वाली है। और अश्वमेध यज्ञ का फल प्रदान करती है। श्लेषात्मक, नक्तमाल, कपित्थ, शाल्मलि, नीप (कदम्ब) विभीतक (बहेड़ा) बल्लियां तथा वे वृक्ष जिन पर पक्षी निवास करते हों यज्ञ के लिए वर्जित माने गए हैं। इसके अतिरिक्त जो भी वृक्ष यज्ञों में निषेध हैं उन्हें कभी भी श्राद्ध कर्म में प्रयोग नहीं करने चाहिये। पितरों के मन्त्रों में अन्त में स्वधा और देवताओं के यज्ञ में स्वाहा का उच्चारण करना चाहिए।

वायुमहापुराण का श्राद्धकल्प नामक ७५वां अध्याय समाप्त हुआ ॥७५॥

छिहत्तरवां अध्याय

(श्राद्ध कल्प)

सूतजी बोले—हे ऋषिगणो! यह विधि अथर्व वेद के अनुसार

जो पितर गण देवगण हैं उनके भी अलावा और भी पितृगण हैं। पितरों की सर्व प्रथम और विशेष पूजा करनी चाहिये। और देवताओं की बाद में पूजा करनी चाहिए।

हे धर्मज्ञ ! प्राचीन समय में एक विश्वा नाम की दक्ष की पुत्री थी जो लोक प्रसिद्ध थी दक्ष ने विधि पूर्वक धर्म को समर्पित किया था। उसके पुत्र विश्वेदेवा नाम से कहे जाते हैं। ये विश्वेदेव सभी के द्वारा नमस्कार करने योग्य हैं। इन्होंने हिमालय के मनोहर शिखर पर परम कठोर तप किया। उनके तप से प्रसन्न होकर पितरगण उनसे शुद्ध मन होकर बोले–हे विश्वे देवागण आपसे हम प्रसन्न हैं बरदान माँगिये। पितरों के इस प्रकार कहने पर ब्रह्मा जी ने विश्वे-देवों से यह कहा।

ब्रह्माजी बोले–आपके इस तप से महादेव जी तथा मैं भी परम प्रसन्न हैं। कहो हम आपका कौनसा मनोरथ पूर्ण करें। इस प्रकार ब्रह्मा के कहने पर विश्वेदेवा बोले–हमारी यह अभिलाषा है कि हमें श्राद्ध का अंश मिले। ब्रह्माजी ने कहा–आप जो चाहते हैं वह सफल होगा इस लोक में जो कर्म हमारे लिये किये जाते हैं उनमें आपका भी भाग होगा। तुम हमारे साथ रहोगे हमारे लिये किये गये श्राद्ध में आप लोगों का भी आसन रहेगा। श्राद्ध में कुतपों मालाओं और सुगन्धित द्रव्यों तथा अन्न आदि जो भक्षणीय वस्तुयें हैं उनमें तुम ही प्रथम पूजनीय होगे इस तरह जो भी वस्तुयें दी जावेंगी। वे पहले आपको दी जावेगी और बाद में हमको दी जावेगी विसर्सन में पहले हमको स्थान मिलेगा बाद में आपका विस-र्जन होगा। समस्त भूतों तथा पितरों और देवताओं के उद्देश्य से भी श्राद्ध किये जाते हैं उनमें शुद्ध की सब प्रकार से रक्षा और सत्कार ये दो विधान कहे गये हैं। इन दोनों को सुचारु रूप से हो जाने पर ही श्राद्ध को ठीक प्रकार सम्पन्न मानना चाहिए। हमारी ये कही गई सभी बातें सत्य होंगी। इस प्रकार ब्रह्माजी विश्वेदेवों को वरदान देकर चले गये।

वेदों में मनुष्यों के लिये नित्य करने के लिये पांच महायज्ञों का विधान है। इनको करने वालों को जिस पुण्य स्थानों की प्राप्ति होती है उन्हें सुनिये भय रहित, अहंकार से रहित, शोक रहित, परिश्रम को दूर करने वाले सभी मनोरथों को पूर्ण करने वाले ब्रह्म के स्थान को वे मनुष्य जाते हैं जो पांच महायज्ञों का नित्य अनुष्ठान करते हैं। वे पांच महायज्ञ केवल मन्त्रों को छोड़कर शूद्रों के द्वारा भी करने चाहिये। इनके बिना जो मनुष्य भोजन करता है वह नित्य ऋण को ही भक्षण करता है। जो केवल अपने किये भोजन करता है वह पापी है और ऋण का भोजन करता है। इसलिये बुद्धिमान पुरुष को चाहिये कि सदा नित्य पंच महायज्ञों को किया करे। कुछ लोग पितरों के जीवित रहने पर भी नैवेद्य करने की इच्छा रखते हैं। उनको उसके बाद जलदान भी करना चाहिये। जल का कलश देना चाहिये। विहित बलि भी प्रदान करनी चाहिये। सूक्ष्म मात्रा वाली बलि को सींगों वाली गौओं के ऊपर छोड़नी चाहिये। जीवित पितरों के लिये पिण्डदान की विधि नहीं है। उन्हें केवल विधि-पूर्वक, सुन्दर, पसन्द आने वाले अन्नों एवं अन्य भक्ष्य पदार्थों को खिलाना चाहिये। यह वेद समस्त विधान है।

ये पितर देवों के भी देव तथा पुण्यात्मा महात्मा हैं। कुछ आचार्य श्राद्ध में सर्व प्रथम ब्राह्मणों के पूजन का विधान तदन्तर पिण्डदान बतलाते हैं। यह धर्मार्थ में कुशल गुरु बृहस्पति जी का है। पितृगण महात्मा तथा परमयोगी हैं। ये लोग चन्द्रमा को भी सन्तुष्ट करने वाले हैं। अतः सर्व प्रथम इन्हें पिण्डदान करना चाहिये पश्चात् ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिए। इसलिये पितरों में श्रद्धा एवं भक्ति रखने वाले व्यक्ति को पवित्र होकर उन परम पवित्र योगियों को पिण्डदान करना चाहिये। पिण्डदान पितरों के लिये अग्नि में की हुई हवि के समान है। श्राद्ध के अवसर पर यदि हजारों ब्राह्मणों में से एक भी ब्राह्मण योगाभ्यास में परायण में तो वह यजमान आदि के सहित सभी का उद्धार कर लेता है। जहां पर असत्पुरुषों का सम्मान तथा सत्पुरुषों का निरादर होता है वहां अति

भयंकर देवदण्ड गिरता है। जहां धर्माचरण में रत श्रेष्ठ ब्राह्मणों और अतिथियों के रहते हुये किसी धूर्त या मूर्ख ब्राह्मण को भोजन कराया जाता है, वह अपने पूर्वजन्मों के पुण्यों के रहते हुये भी नाश को प्राप्त हो जाते हैं। भोग की इच्छा करने वाले मनुष्य को भक्त सहित अग्नि में पिण्डदान करना चाहिए, और सन्तान की इच्छा रखने वाली स्त्रियों को हमेशा पिण्ड देने चाहिये। अपने तेज और कान्ति की इच्छा रखने वाले मनुष्यों को गायों को पिण्डदान देना चाहिये। दीर्घायु की इच्छा वाले मनुष्यों को चाहिये कि वे कौओं को पिण्डदान दें, सुकुमारता के लिए मुर्गों को पिण्डदान देना चाहिए। पितरों के स्थान आकाश और दक्षिण दिशा हैं, इस कारण दक्षिण दिशा क तरफ मुंह करके खड़े होकर तथा जल में खड़े होकर आकाश को बलिदान देना चाहिए। मैंने आपसे पिण्डदान के फल का वर्णन किया है, अब मैं आपको श्राद्ध में पिण क्रिया बतलाऊँगा।

श्राद्ध में पिण्डों का उद्धार करने की क्रिया को विधि पूर्वक करना चाहिए। अन्न, फल, फूल, भक्ष्य इन सबमें से एक एक टुकड़ा तोड़कर सबसे पहले अग्नि में डाल देना चाहिए। पिण्डदान करने वाले व्यक्ति को दक्षिण दिशा की तरफ मुख करके खाने का सामान तथा उत्तम मीठे फल इन सबमें से अग्नि में हवन करके पिण्डदान करना चाहिए। यम को और चन्द्रमा को पिण्डदान देने के बाद जलानयन करने के बाद ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिए। अपनी सामर्थ्य के अनुसार नाना तरह के भोजन फल, पकवान का भोजन कराना चाहिए। ब्राह्मणों को सभी तरह के पदार्थों से तृप्त करना चाहिए भोजन कराने के बाद प्रसन्न चित्त होकर हाथ जोड़कर उनकी पूजा करनी चाहिए। इस प्रकार श्रद्धा पूर्वक श्राद्ध करने वाले मनुष्यों को सभी तरह के मन इच्छित वस्तुऐं प्राप्त होती हैं। प्रजापति ब्रह्माजी उनको, सत्कार, यज्ञ चतुरता, दान इत्यादि की शक्ति देते हैं। हे ऋषियो! इसके बाद श्राद्ध कर्म में ब्राह्मणों के भोजन करने के बाद जो क्रिया होती है अब में उसको बताऊँगा।

सबसे पहले पितरों में श्रद्धा रखने वाला व्यक्ति पृथ्वी को लीप कर उस पर विधि पूर्वक विकिरण करे, फिर ब्राह्मणों से स्वधा शब्द बुलवाकर उनके शक्ति के अनुसार दक्षिणा देकर उनका आदर करके बचे हुए अन्न की आज्ञा प्राप्त करके हाथ जोड़कर अपनी इन्द्रियों और मन को वश में रखकर कुछ दूर तक उनको पहुँचादे, फिर विसर्जन करना चाहिए।

इति श्री वायु महापुराण का श्राद्ध कल्प नाम का ७६वाँ अध्याय समाप्त

सतहत्तरवां अध्याय

(श्राद्ध कल्प)

बृहस्पति जी ने कहा—हे ऋषियो ! पितरगण केवल एक बार की पूजा करने पर ही प्रसन्न हो जाते हैं, ये पितरगण कभी नष्ट नहीं होते हैं ये पितरगण योगी महात्मा हैं, ये पाप से रहित हैं ये महान तेजस्वी हैं अब मैं आपको स्वर्ग प्राप्त करने, ऐश्वर्य को देने वाले तथा मोक्ष प्राप्त करने वाले नदी, तीर्थ देश और पर्वत हैं वह पर्वत, सरोवरों का वर्णन सुनाऊँगा। सभी पर्वतों में श्रेष्ठ अमर कराटक नाम का पर्वत है वह पर्वत तीनों लोकों में प्रसिद्ध है। उस पर्वत पर सिद्ध और चारण रहते हैं तथा उसी पर्वत पर करोड़ों वर्षों तक भगवान अंगिरा ने कठिन तपस्या की थी। इस पर्वत पर असुर और राक्षसों का भी भय नहीं है वहां मृत्यु भी नहीं पहुँचपाती। जब तक यह पृथ्वी स्थित है तथा लक्ष्मी विराजमान रहेगी तभी तक यह पर्वत अपने उत्तम तेज और यश से शोभायमान रहेगा। उस पर्वत के ऊँचे शिखरों पर खिले फूलों से वृक्ष शोभित हैं वह वृक्ष इस प्रकार चमकते हैं मालूम पड़ता है कि संवर्तक अग्नि जल रही हो। इस श्रेष्ठ पर्वत पर सुवर्ण के समान चमकीले तथा मनोहर सुगन्ध वाले मृदु कुश पैदा होते हैं। पुराने समय में अंगिराजी ने अग्नि होत्र में पृथ्वी पर उत्तम कुशों का आसन बिछाया था, दक्षिण भाग में नर्मदा नदी के जल को पिया था, उसके फल से उन्हें स्वर्ग के सोपान दिखाई

देते थे। जो विद्वान ब्राह्मण अमरकराटक नाम के पर्वत पर उन्हीं कुशों पर एक बार भी पिण्डदान करता है, मैं उसी के फल को बतलाऊँगा उस श्राद्ध के करने से पितरगण प्रसन्न होते हैं और अक्षय फल प्राप्त होता है पितरगण इस पवित्र पर्वत को प्राप्त करके अन्तर्धान हो जाते हैं उस पर्वत पर ज्वाला नामका सरोवर है तथा विशल्य करणी नाम की एक नदी है जो हड्डी वाले जीवों को रोग से मुक्त करते हैं। अमरकराटक नाम के पर्वत पर पूर्व दक्षिण दिशा की तरफ एक पवित्र बावली है। उसके निचले भाग में के पितरों सिद्ध क्षेत्र नामका स्थान है, पृथ्वी पर यह स्थान श्रेष्ठ माना जाता है। देवता और दैत्य दोनों का ही वह स्थान आदरणीय है। जो मनुष्य अमरकराटक नाम के पर्वत पर जाकर श्रद्धापूर्वक श्राध्द करते हैं, वे पुरुष महान भाग्यशाली हैं इस प्रकार शुक्राचार्य जी भी उनकी प्रशंसा करते हैं। अमरकराटक नाम के पर्वत थोड़ी तपस्या से ही सिध्दि प्राप्त होती है। एक बार की पूजा करने पर ही पितरगण परमस्वर्ग को प्राप्त करते हैं।

महेन्द्र नाम के पर्वत पर इन्द्र का बना हुआ एक पुण्यशाली स्थान है, वहां पर निवास करने से पितरगण प्रसन्न होते हैं। विल्वाध नाम के पर्वत पर दिव्य नेत्र प्राप्त होते हैं, जिससे मनुष्य अदृश्य होकर देवताओं की तरह पृथ्वी पर घूमा करता है। सप्त गोदावर तथा गौकर्ण नाम के पवित्र स्थान पर स्नान करने से परम पवित्र होकर अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त करता है। धूप ताप नाम के तीर्थ स्थान में स्नान करने से परम पद को प्राप्त होता है। उसी स्थान पर देव महादेव जी ने कठिन तप किया था। ब्राह्मणों का कथन है कि गोकर्ण नामके तीर्थ स्थान पर नास्तिकों के लिये एक प्रधान कारण माना गया है। जो मनुष्य ब्राह्मण नहीं हैं वे वहां पर गायत्री का पाठ करते हैं, उनका गायत्री का पाठ करने का फल नहीं प्राप्त होता है सिध्दों और चारणों से सजे हुए देवर्षि के नवन वाले शिखर पर रहने से मनुष्य को स्वर्ग प्राप्त होता है।

उस सुन्दर शिखर पर चन्दन इत्यादि के वृक्ष शोभायमान हैं वहां पर चन्दन से सुगन्धित शीतल जल की धारा बहती रहती है उस जल की धाराओं से ताम्रपर्णी नाम की एक नदी निकली है। उस पर्वत-राज से निकली हुई ताम्रपर्णी नाम की नदी मदोन्मत्त और खेद से थकी हुई बाला की तरह धीरे धीरे बहती हुई दक्षिण समद्र में जाकर गिरती है। महा समुद्र में मिलकर इस ताम्रपर्णी नदी का जल शंख मुक्ता और शंख मुक्तिका के रूप में बदल जाते हैं। जो मनुष्य उस समुद्र के जल को शंख मुक्ताओं सहित लाते हैं वे सभी व्याधियों से छुटकारा प्राप्त करके स्वर्ग को प्राप्त होते हैं। चन्दनों से युक्त शंख और मुक्ताओं के दान करने से वहां पर लोग अपने पाप करने वाले पितरों का उद्धार करते हैं। इन पुण्यतीर्थों में जैसे-चन्द्र, कुमारी, कावेरी, अक्षय प्रभव, श्री पर्वत, वेंकृत, औशिर नाम के पर्वत और तीर्थ स्थानों पर मनुष्य पितरों का उद्धार करने जाते हैं। हे विप्र गणों! ये सभी तीर्थ सिद्धि को प्रदान करने वाले हैं। मनुष्य, अपने शरीर को छोड़ कर स्वर्ग को प्राप्त करता है। इन तीर्थों में शुभ कर्म करने का फल दूसरे जन्म में मिलता है। पितरों के एक नर्मदा नाम की कन्या है जो सभी नदियों में श्रेष्ठ और पुण्यशाली है। इसके तट पर श्राद्ध कर्म करने से अक्षय फल प्राप्त होता है। सिद्धों और चारणों से पूजित माठर नाम के पवित्र वन में वे अन्तर्धान नहीं होते हैं। उस महान पर्वत पर उनकी आसक्ति रहती है।

एक पवित्र विंध्यागिरि नाम का तीर्थ स्थान है। उस तीर्थ स्थान पर जाकर पाप पुण्य की पहिचान मानी जाती है, जो मनुष्य पापात्मा हैं वे धारा को नहीं देख पाते है और जो पुण्य सन्त हैं वे धारा को देखते हैं। उस धारा में पापियों के पाप दिखाई पड़ते हैं। शुभ कर्म करने वाले श्रेष्ठ मनुष्यों को ही वह धारा साफ दिखाई देती है। कौशला पर्वत पर मतंग के पापों को नष्ट करने वाली निधूदनी नाम की एक नदी है उस नदी में स्नान करने पक्षीगण भी स्वर्ग को प्राप्त करते हैं। कुमार कौशला नाम के तीर्थ पात पञ्जर नाम के तीर्थ, समुद्रान्त

पाण्डुकुल, पाण्डारक प्रभव, अभय, श्रीवृक्ष, अभ्रकूट, जम्बूमार्ग, असिता नाम के तीर्थ स्थान में नित्य श्राद्ध करने से अक्षय फल प्राप्त होता है।

पुष्कर तीर्थ में श्राद्ध करने से अक्षय फल प्राप्त होता है। महा-समुद्र में प्रभास नाम का तीर्थ है। उस तीर्थ में श्राद्ध करने से भी ऐसे ही फल की प्राप्ति होती है। देविका तीर्थ में वृष नाम का एक कूप का जल योजना गौओं के शब्द से ऊपर उछलता है जो मनुष्य श्रद्धा पूर्वक इस कूप पर श्राद्ध करता है, अब मैं उसका फल बता-ऊंगा, वह श्राद्ध सभी मनोरथों को पूर्ण करता है तथा पितरों को प्रसन्न करता है। वहां पर साक्षात अग्नि की सनातन काल से स्थित जातवेद नाम की शिला है। उस स्थान पर जो मनुष्य उस अग्नि में प्रवेश करता है वह स्वर्ग को प्राप्त करता है। जब अग्नि कुछ शान्त हो जाती है तब वह दुबारा जन्म धारण करता है, उस तीर्थ मे श्राद्ध करने से अक्षय फल प्राप्त होता है। दशवाश्वमेध तीर्थ में तथा पंच्चा-श्वमेध तीर्थ में श्राद्धकर्म करने से दश और पांच अश्वमेध यज्ञों के फल के समान प्राप्त होता है। हयगिरा नामके पवित्र तीर्थ में श्राद्ध करने से सभी मन इच्छित वस्तुएं प्राप्त होती हैं। प्रख्यात तीर्थ में स्वर्ग प्राप्त होता है। कुम्भतीर्थ में श्राद्ध करने से सभी पापों का नाश हो जाता है।

अजतुंग नाम के तीर्थ स्थान में हमेशा पितरों का तर्पण करना चाहिए, उस स्थान पर पर्वों के समय देवताओं की परिछाई दिखाई पड़ती है। सम्पूर्ण पृथ्वी पर यह तीर्थ बहुत ही पवित्र माना जाता है, यहां पर श्राद्ध करने से अक्षय फल प्राप्त होता है सभी तरह के पाप पूर्ण कर्मों से रहित योगेश्वरों से सेवित उसपरम पवित्र तीर्थ में श्राद्ध करने से पितर गण सदा प्रसन्न रहते हैं इस लोक में जो मनुष्य इन्द्रिय के वश में रखकर श्राद्ध करता है, वह मृत्यु के बाद स्वर्ग को प्राप्त करता है एक पवित्र शिव नाम का ह्रद है, वहां पर सभी गुणों से युक्त व्याससर और ब्रह्मसर नाम के दो सरोवर हैं, एक उज्जन्त नामका पर्व भी वहीं पर है उस पर्वत पर बड़े-बड़े योगीश्वर लोग रहते हैं।

उसी स्थान पर वसिष्ठ ऋषि का आश्रम भी है तथा इन्हीं तीर्थों में ऋक्, यजु, सामवेद का शिर स्वरूप, कापोत तथा पुष्प नाम का तीर्थ प्रजापति ब्रह्माजी ने बनाया था । ये तीर्थ पांचवे वेद के नाम से प्रसिध्द है । इन सभी तीर्थों की यात्रा करके ब्राह्मण सनातन अग्नि की तरह तेजवान कान्तिमयी होकर सभी पाप से छूट जाते हैं । इन तीर्थों में श्राद्ध करने से अक्षय फल प्राप्त होता है । इस स्थान पर जप, हवन, और तपस्या करने से भी अनन्तफल प्राप्त होता है। पुण्डरीक नाम के तीर्थ में श्राद्ध करने से कमल के समान सुन्दर फल प्राप्त होता है । ब्रह्मतीर्थ नाम के पवित्र तीर्थ में श्राध्द करने से अश्व-मेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है । सिन्धु सागर सम्भेद तथा पंचनद तीर्थ में श्राध्द करने से अनन्त फल की प्राप्ति होती है । क्षीरकात्मा तीर्थ और पराड़वा तीर्थ में श्राध्द करने से अक्षय फल प्राप्त होता है। सप्तरद तीर्थ और मानस तीर्थ में श्राध्द कर्म करने से अक्षय फल प्राप्त होता । महाकूट, वन्द, और त्रिककुद पर्वतों तट पर भी श्राध्द कर्म करने का अधिक माहात्म्य बतलाया है । महावेदी में शाम के समय अनोखे दृश्य दिखाई देते हैं किन्तु नास्तिक मनुष्यों को नहीं दिखाई देते हैं । यह अनोंखे दृश्य सिर्फ श्रध्दावान व्यक्ति को ही दिखाई देते हैं । उस स्थान पर सनातन काल से चली आने वाली जातवेद नाम की अग्नि की एक शिला है । उस शिला पर सदा श्राध्द कर्म तथा अग्नि होत्रादि कार्य करने चाहिये, उस शिला इन पुण्य कर्मों के करने से अक्षय फल प्राप्त होता है । पितरों के निमित्त श्राद्ध करने की इच्छा रखने वाले व्यक्ति को सायंकाल के समय श्राद्ध कर्म करना चाहिए । यहां पापी और पुण्य करने वाले व्यक्तियों की पहचान हो जाती है । वहां स्वर्ग्यमार्ग प्रद नामका शीघ्र ही वर देने वाला एक सरोवर है । इस सरोवर में सप्तऋषि आपस के बैर भाव को छोड़ स्वर्ग को गये थे । आज तक उनके बैर भाव के चिन्ह दिखाई देते हैं । इस पवित्र तीर्थ में स्नान करने से मनुष्य स्वर्ग को प्राप्त होते हैं । उसी स्थान के पास ही नन्दिकेश्वर और सिद्ध मनुष्यों

से सेवित एक प्रसिद्ध स्थान है। उस स्थान पर नन्दिकेश्वर की मूर्ति पापी मनुष्यों को नहीं दिखाई देती है। सूर्य निकलने के समय उस जगह सोने से बने हुए यज्ञ के खम्भे दिखाई पड़ते हैं। उनकी परिक्रमा लगाकर मनुष्य अदृश्य होकर स्वर्ग लोक को प्राप्त होते हैं।

कुरुक्षेत्र सभी तीर्थों में पवित्र माना जाता है यह स्थान योगी महात्मा सनत्कुमार का पुण्यमयी स्थान कहा जाता है। इस कुरुक्षेत्र तीर्थ में तिल का दान करने से पितरगणों की सदा के लिये तृप्ति हो जाती है। धर्मराज युधिष्ठर के निवास स्थान पर श्राद्ध करने से अक्षय फल मिलता है। अमावस्या के दिन श्राद्ध करने से अक्षय फल तथा कान्ति यश प्राप्त होता है। कुरुक्षेत्र के पास रहने वाले व्यक्तियों के लिये यहां श्राद्ध करना अधिक पुण्य देने वाला माना जाता है।

अपने पिता के सुपात्र पुत्र पितरों की कुरुक्षेत्र में पूजा करके ऋण से मुक्त हो जाते हैं। विनशन, प्लक्षप्रस्रवण, सरस्वती के व्यास तीर्थ, ओंकारपवन, गंगाजी, मैनाक पर्वत पर श्रद्धा पूर्वक श्राद्ध करने से अक्षय फल की प्राप्ति होती है। यमुना प्रभवतीर्थ में श्राद्ध करने से मनुष्य अपने पापों से छूट जाते हैं। इस तीर्थ में गरम और ठंडे दोनों तरह के जल मिलते हैं। यह पवित्र यमुनाजी मार्तण्डजी की कन्या हैं और यमराज की बहिन हैं। यमुनातट पर श्राद्ध करने से अक्षय फल प्राप्त होता है। ब्रह्मतुंग नाम के सरोवर में स्नान करके श्राद्ध करने से तथा जप और हवन इत्यादि करने से अक्षय फल की प्राप्ति होती है। महर्षि वसिष्ठजी उस स्थान पर घूमते रहते हैं। उस स्थान पर आज तक मणियों की सजी हुई वृक्षों की पंक्तियां दिखाई देती हैं। वहां पर पाप पुण्य को दिखाने वाली एक तराजू दिखाई देती है। ब्राह्मणों का कहना है कि उस तराजू पर तुलने से स्वर्ग प्राप्त होता है। पितरों की गन्धकाली नाम की प्रसिद्ध कन्या उस स्थान पर निवास करती है। पराशर ऋषि के पुत्र और प्रजापति ब्रह्माजी के चतुर्थ अंशस्वा परम योगीश्वर महात्मा व्यासजी उस कन्या से पैदा होंगे, महात्मा व्यासजी ने वेदों को चार भागों में

बांटा है। उस स्थान पर आच्छोदक नामका एक सरोवर है। उसी सरोवर से आच्छोदा नाम की नदी प्रकट हुई, फिर वे मत्स्य योनि में उत्पन्न हुईं, उसके पवित्र स्थान पर सज्जन मनुष्य सदा निवास करते हैं। उस पवित्र स्थान पर एक बार भी श्राद्ध करने से अक्षय फल मिलता है। अच्छोदा नामकी नदी पर श्राद्ध करने से योग और समाधि का वर प्राप्त होता है। कुबेरतुंग व्यामोच्य और व्यास तीर्थ मे स्नान करने से पुण्य कर्म करने वाले ब्राह्मण मनुष्य को अक्षय फल प्राप्त होता है। उस स्थान से पूर्व और दक्षिण दिशा की तरफ नन्दा नाम की एक वेदी है। उस स्थान पर पितरों का श्राद्ध करने से दुबारा जन्म ग्रहण नहीं करना पड़ता है। पुण्यात्मा मनुष्य उसको नित्य प्रति पूजते हैं लेकिन पापात्मा मनुष्य उसे नहीं देख सकते हैं। जिस स्थान पर भगवान शंकर जी ने चरण न्यास किया है वह सिद्धों का पवित्र स्थान है वहां पर श्राद्धादि कर्म करने से दुबारा जन्म नहीं लेना पड़ता है। देवी पार्वती के उप पवित्र स्थान पर भगवान शंकरजी ने एक पैर पर खड़े होकर कठिन तपस्या की थी। उमातुंग तीर्थ में बरफ और जल दोनों ही देवयुग से स्थित हैं। उमातुंग भृगु तुंग, ब्रह्मतुंग, महालय, काद्रवती, शाड़िली गुफा, वामन गुफा इत्यादि तीर्थों की यात्रा करने से मनुष्य पवित्रात्मा होकर स्वर्ग को प्राप्त करता है। इन सब तीर्थों में श्राद्ध, जप, हवन करने से अक्षय फल होता है। उस स्थान पर गुरु में श्रद्धा रखने वाले ब्रह्मचारी गुरु शिष्य सैकड़ों वर्षों तक यज्ञादि का अनुष्ठान करने हैं। उस पवित्र तीर्थ में स्नान करने से अक्षय फल प्राप्त होता है। वहाँ पर कुमार धारा नाम की एक तीर्थ है वह तीर्थ सभी पापों को नष्ट करने वाला है। शैलकीर्ति नाम के पवित्र तीर्थ स्थान में स्नान करने से मनुष्य सभी मनोरथों को प्राप्त करता है। सभी मनुष्यों से अदृश्य होकर वह पृथ्वी पर घूमा करता है। कश्यप में कालसर्पि नाम का एक महान पवित्र स्थान है। वहां पर नित्य प्रति श्रद्धा पूर्वक श्राद्ध करना चाहिए,

ऐसा करने से मनुष्य को अक्षय फल प्राप्त होता है। शालग्राम तीर्थ पर श्राध्द करने से अक्षय फल की प्राप्ति होती है। इस पवित्र तीर्थ में पापी मनुष्य नहीं जा सकते, केवल पुण्यात्मा मनुष्यों के लिये यह तीर्थ प्रसिध्द है। शालग्राम के पास एक सरोवर है उस सरोवर में नाग राज रहता है वह पुण्यात्मा मनुष्यों के द्वारा किये श्राध्द के पिण्ड़ों को ही खाता है। देवदारु वन में भी श्राध्द करने से अक्षय फल की प्राप्ति होती है। भागीरथी तीर्थ और प्रयाग तीर्थ में श्राध्द करने से बहुत पुण्य होता है और अक्षय फल प्राप्त होता है। कालंजर, दशार्ण, नैमिष, कुरुजांगल और बनारस तीर्थों को श्रध्दा पूर्वक श्राध्द करना चाहिए। बनारस में भगवान शंकर नित्य निवास करते हैं। इस कारण यहां पर श्राद्ध करने से अक्षय फल प्राप्त होता है। इन तीर्थों में श्राद्ध, जय हवन यज्ञ तथा अन्य शुभ कर्म करने से मनुष्य पवित्र होकर अक्षय फल प्राप्त करता है।

लौहित्य वैतरणी और स्वर्ण वेदी में भी श्राध्द करने से अक्षय फल प्राप्त होता है। गंगाजी, धर्मपृष्ठ, ब्रह्म सरोवर, गया, अभ्रकूट, प्रभृति तीर्थों में श्राद्ध करने से अक्षय फल प्राप्त होता है भरत जी के पवित्र आश्रम अरण्य में भी श्राद्ध करने का एक महान फल होता है। अरण्य नाम के श्राश्रम के चारों तरफ पांच योजन तक बरफ गिरता है। उस अरण्य बन मांस के नेत्र वालों को भी मंतग ऋषि का आश्रम दिखाई देता है। पंच्चवन नाम के तीर्थ में भी श्राद्ध करने अक्षय फल प्राप्त होता है। पाण्डुविशाल नामके तीर्थ में भी धर्म श्राद्ध करने से अक्षय फल प्राप्त होता है। जो पापी मनुष्य होते हैं, वे वहां पर तुलामान, चाप और अनेक प्रकार के शस्त्रों सहित समय आने पर गोता लगाते हैं। महारुद्र और कौशिकी में भी श्राध्द करने से अनन्त फल प्राप्त होता है। श्री भगवान शंकरजी ने मुण्ड पृष्ठ में पदन्यास किया था बहुत देवयुगों तक कठिन तपस्या की थी। मुण्डपृष्ठ तीर्थ के उत्तर में एक प्रसिध्द कनकनन्दी नामका तीर्थ है।

वह प्रसिध्द तीर्थ देवता और ऋषियों से सेवित है। उस तीर्थ में स्नान करने से स्वर्ग प्राप्त होता है। उस तीर्थ में श्राध्द करने से अक्षय फल प्राप्त होता है। पुण्यात्मा मनुष्य उस तीर्थ में स्नान करके तीनों ऋणों से छूट जाता है। उस सरोवर के किनारे पर देवताओं का एक बहुत बड़ा मन्दिर है। उस मन्दिर में बैठकर जप करने से स्वर्ग प्राप्त होता है। मानस तीर्थ की यात्रा करने से बड़ी सिध्दि शीघ्र ही प्राप्त होती है। वहां पर श्राद्ध करने से अक्षय फल प्राप्त होता है। मानस सरोवर में एक अनोखा दृश्य दिखाई देता है। वहां पर पवित्र गंगाजी आकाश मार्ग से निकल कर पृथ्वी पर आती हुई दिखाई देती हैं। यह देवी गंगाजी चन्द्र मण्डल से पृथ्वी पर गिरती हैं। आकाश मण्डल में सूर्य के समान चमकीला एक तोरण दिखाई देता है पवित्र नदी चन्द्रभागा उसी स्थान से निकली है। चन्द्रभागा और सिन्धु नदी मानस सरोवर की तरह ही पवित्र पुण्यदायी हैं। सभी नदियों में पवित्र सिन्धु नदी पश्चिम समुद्र में जाकर मिलती है। एक बहुत विशाल हिमवान पर्वत है जहां पर नाना प्रकार की धातुऐं पैदा होती है। वह हिमवान पर्वत अस्सी हजार योजन के विस्तार में फैला हुआ है। इस पर्वत पर सिद्ध और चारण निवास करते हैं। उस पर्वत पर सुषुम्ना नामकी एक पुष्करणी है जिसमें स्नान करने से अक्षय फल मिलता है। हिमवान पर्वत का प्रत्येक भाग पुण्यफल देने वाला है उस पर्वत पर जन्म लेने वाले आदमी दस हजार वर्षों तक जीवित रहते हैं। पुण्यात्मा पुरुषों को इन पवित्र तीर्थों में स्नान, दान और श्राद्ध श्रध्दा पूर्वक करना चाहिए। उच्च गिरिशिखर पर, कन्दरा में, गुफाओं में, गंगातट पर, यमुना तट पर, पर्वतों पर गौशालाओं में, युगारम्भ की तिथियों में, महासमुद्र के किनारे, नदियों के संगम पर, लिये पुते स्वच्छ स्थान पर तथा गोबर से लिपे पुते एकान्त घर में नित्य प्रतिदिन भक्ति सहित श्राद्ध करना चाहिए, इस प्रकार श्राद्ध करने से मनुष्यों के सभी मनोरथ पूर्ण होते हैं। इन तीर्थों की यात्रा करने वाला और पापी मनुष्य भी

तिर्यक योनि में जन्म नहीं लेता है। पापी मनुष्य धैर्य श्रद्धा और अपने मन और इन्द्रियों को वश में रखकर तीर्थ यात्रा करता है तो वह सभी पापों से छूट जाता है और स्वर्ग को प्राप्त होता है। गुरु रूपी तीर्थ से परमसिद्धि प्राप्त होती है। यह तीर्थ सभी तीर्थों से पवित्र माना जाता है और इस तीर्थ से भी ध्यान तीर्थ पवित्र माना गया है। यह ध्यान साक्षात् ब्रह्म का तीर्थ है यह तीर्थ उपवास में भी पवित्र माना गया है इसका कभी नाश नहीं होता।

प्राण और अपानवायु इन दोनों के समान करके इन्द्रियों उनके विषयों और बुद्धि को मन में बांधने से सबकी निवृति हो जाती है। सभी इन्द्रियों में एक मन ही चचल और चलायमान रहता है निराहार रहने से मन की चंचलता और कठोरता समाप्त होजाती है, अतः इसी कारण उपवास करना कठिन तप माना गया है। चंचल बुद्धि और मनको वश में रखने से अच्छी बुध्दि पैदा होती है। सभी पापों के नष्ट हो जाने पर और इन्द्रियों के नष्ट होजाने पर आत्मा शुध्द हो जाती है। सभी व्यक्त और अमल वस्तुओं के कारण और गुणों से योगीजन अपनी आत्मा को शुध्द रखते हैं। उनके मरने के बाद न कोई गति होती है न कोई स्थान ही होता है, वे व्यक्त और अव्यक्त किसी में निवास नहीं करते हैं। उनके सत और असत के विषय में कुछ कह नहीं सकते हैं।

[श्री वायु महापुराण का श्राध्द कल्प नामका सतहत्तरवां अध्याय समाप्त हुआ]

अठहत्तरवाँ अध्याय

(श्राध्द कल्प)

वृहस्पतिजी बोले—मैं अब आपको श्राध्द में देने वाले दान और उनसे मिलने का फल तथा श्राध्द में कौन कौन सी वस्तुये देनी चाहिए और कौन कौनसी वस्तुयें नहीं देनी चाहिए इन सबके विषय में बताऊँगा। बसन्त ऋतु में और ग्रीष्म ऋतु में अग्नि होत्रादि

कर्म करना चाहिये, ये शुभ कर्म करने से अनन्त फल प्राप्त होता है। रात के समय श्राद्ध नहीं करना चाहिये, श्राद्ध कर्म दिन में ही करने चाहिये। ग्रहण के अवसर पर श्राद्ध करना चाहिये जो व्यक्ति ग्रहण के अवसर पर श्राद्ध नहीं करता है वह अत्यन्त भारी दुख सहता हैं। जो मनुष्य ग्रहण के अवसर पर श्राद्ध करता है वह अनन्त फल को प्राप्त करता है। विश्वेदेव, सौम्य, और प्रचुर मांस युक्त इषि, गैंड़ें का सींग पितरों के द्वेष भाव नष्ट करने के लिये नहीं करना चाहिये। महात्मा देवेश के मना करने पर भी विश्वकर्मा ने इन्द्र का सोमपान किया था और उनके पीते समय कुछ बूंद पृथ्वी पर गिर पड़ा, वह गिरा हुआ पदार्थ सांवां के रूप में उत्पन्न होगया और फिर उसी समय पीते समय विश्वकर्मा की नाक के छिद्र से कुछ बूंदें सोम रस की पृथ्वी पर गिर पड़ीं, वे बूंदें ईख के रूप में पैदा होगयीं, अतः सांवां और ईख से पितरों की सभी इच्छाऐं, पूर्ण होती हैं। ईख शीतलता देने वाली मीठी और कफ कारी होता है। जो मनुष्य इन वस्तुओं को श्राद्ध में दान करता है वह शीघ्र ही सिद्धि को प्राप्त करता है। सवां, हस्तिनाम, पटौल, वृहतीफल, अगस्त्य की तीखी शिखायें इत्यादि वस्तुऐं पितरों को मधुर और प्रिय लगती हैं। श्राद्ध में नागर और दीर्घ मूलक भी दान करना चाहिये, श्राद्ध में वंशी, करीट, सुरमा सर्जक, और भूस्तृण का भी दान करना चहिये।

लहसुन, गाजर, प्याज, करम्भ, पिण्डमूलक इत्यादि पदार्थ श्राद्ध में नहीं दान करना चाहिये। अब मैं आपको इसका कारण बतलाऊँगा किये वस्तुऐं श्राद्ध में क्यों नहीं दान करनी चाहिये। प्राचीन काल में देवता और राक्षसों का बहुत भारी युद्ध हुआ था, उस युद्ध में देवताओं से पराजित राजा बलि के सरीर में घाव होगये थे, उस घाव से रक्त की बूंद निकल कर पृथ्वी पर गिर पड़ी! अतः वे ही इन वस्तुओं के रूप में पैदा हुये। अतः श्राद्ध कर्म में इन वस्तुओं को दान नहीं करना चाहिये। श्राद्ध कर्म में गौंद, लवण, द्रव्य और ऊषण वस्तुऐं भी नहीं दान करना

चाहिये । रजस्वला स्त्रियों को भी श्राद्ध कर्म में नहीं जाना चाहिये। दुर्गन्धि पूर्ण, फैनों से व्याप्त, छोटे छोटे गढ्ढों का पानी, भेड़, मृग बकरी, ऊँट, और इस रेखुर वाले जानवरों का झूठा पानी, महीष, चमर और वन के अनेक पशुओं का पिया हुआ गन्दा पानी श्राद्ध कर्म में नहीं लेना चाहिये। इसके बाद अब में आपको उन स्थान और मनुष्यों के विषय में बतलाऊँगा जिसमें कि कौन कौन से मनुष्यों को नहीं देखना चाहिये और किन किन स्थानों पर श्राध्द नहीं करना चाहिए ।

श्राद्ध कर्म वन में पैदा होने वाले फल फूल मूल के आहारों से श्रद्धा पूर्वक श्राद्ध करना चाहिए, इस प्रकार श्राद्ध करने से यश बुद्धि प्राप्त होती है ! त्रिशंकू देश में श्राद्ध नहीं करना चाहिए। कारस्कर कलिङ्ग, सिन्धु के उत्तर वर्ती देश और जिस देश में वर्णाश्रम धर्म नष्ट हो चुका हो वहां सराद नहीं करने चाहिए। नगे और असभ्य मनुष्यों को सराद्ध नहीं देखना चाहिए, इन लोगों के देखने पर सराद में दी गई वस्तुएं पितरों को प्राप्त नहीं होती हैं।

शंषु बोले--हे प्रभो ! वे मनुष्य कौन से हैं जो नंगे रहते हैं आप हमको उनका विस्तार से वर्णन सुनाइए। इस प्रकार पूँछने पर बृहस्पति बोले–सभी प्राणियों के लिए तीनों वेद शान्ति प्रदान करने वाले कहे गए हैं, जो मनुष्य अज्ञानी होकर उन्हें छोड़ देते हैं वे नंगे हैं। मनुष्य जब वेद से विमुख होजाता है तब वेद रूप वृक्ष वे सहारा होजाता है। अतः वेद को ही मानना चाहिये वेद ही सब कुछ है जो मनुष्य धर्म का पालन न करके सराद इत्यादि नहीं करते और अपनी इच्छा और शक्ति के सहारे गुजर बसर करते हैं। वे लोग नगे कहलाते हैं। जो मनुष्य व्यर्थ में जटा रख लेते हैं या सिर मुड़वा लेते हैं, या व्यर्थ में ही नग्न रहते हैं. व्यर्थ में व्रत करने वाले, व्यर्थ में जप करके, कुटुम्ब को दुख पहुँचाने वाले मनुष्य भी नंगे कहलाते हैं । इस प्रकार के मनुष्यों को सराद कर्म नहीं करना चाहिये ।

ब्रह्महत्या करने वाले, लोभी, नास्तिक, गुरु की पत्नी को हरण करने वाले, दस्यु, नृशंस, आत्मतत्व ज्ञान से रहित, पाप कर्म करने वाला देवता तथा देवर्षियों की बुराई करने वाले मनुष्यों को श्राद्ध कर्म नहीं करना चाहिये। असुरों और यातुधानों को भी श्राद्ध करना मना है। सतयुग ब्राह्मणों का युग माना जाता है, त्रेता युग वैश्यों का तथा कलियुग शूद्रों का युग माना जाता है।

पितरों ने कहा—सतयुग में वेद पूजित होते हैं अतः वेदों की पूजा होती थी, त्रेतायुग में देवताओं की पूजा होती थी, द्वापर युग में शस्त्र पूजित माने जाते थे अतः मनुष्यों को युद्ध अधिक प्रिय लगता था और कलियुग में लोग पाखण्डी होते हैं। श्राद्ध कर्म में अपवित्र, अपमानित, मुर्गे, सुअर, कुत्ता इत्यादि के देखने से श्राद्ध नष्ट होजाता है। जिस घर में बच्चा हुआ हो, अथवा सूतक, मनुष्य बहुत समय से बीमार हो, दुष्ट स्वभाव और विचारों वाला हो, इस प्रकार के मनुष्यों को श्राद्ध कर्म नहीं देखना चाहिए इन मनुष्यों के देखने से श्राद्ध का अन्न नष्ट होजाता है। श्राद्ध के समय पृथ्वी पर मिट्टी और जल से लीपना चाहिये फिर काले तिल पृथ्वी पर छिरट देने चाहिए. प्रयत्न से गुरु, अग्नि और सूर्य को देखने चाहिए श्राद्ध के अन्न को वस्त्र से नहीं छूना चाहिए तथा नमक भी न डालना चाहिए। दही, शाक, भाटे, सफेद रंग का चूसने वाला पदार्थ भी श्राद्ध कर्म में नहीं दान करने चाहिए। इस श्राद्ध कर्म में समुद्र से निकला हुआ नमक पवित्र से पैदा हुआ नमक शुभ पवित्र माना जाता है। ये दोनों प्रकार के नमक पवित्र माने जाते हैं। उनको आग में छोड़कर पुनः दोनों हाथों से निकाल कर अपने माथे से लगा लेना चाहिए। मस्तक ब्रह्मतीर्थ माना जाता है। श्राद्ध के सभी द्रव्यों को पहले जल से धो लेना चाहिए, उनके ऊपर लगी मैल मिट्टी छुड़ा लेनी चाहिए फिर उनको जल में डाल देना चाहिए। अरिष्ट, तुमुल, विल्व, इंगुद श्वदन और विदल इन सभी वस्तुओं को जल से अच्छी प्रकार धोने चाहिये। इसी तरह दांत हड्डी, खाल,

सींग इत्यादि को अच्छी प्रकार से साफ धोना चाहिये। सभी प्रकार के मृत्तिका के बने हुये पदार्थों को अच्छी तरह से धो लेना चाहिये। मिण, हीरे, मोती, प्रवाल, शंख इत्यादि के लिये पीली सरसों का या काले तिल का कल्क बनाकर शुद्धि करना चाहिये। सभी प्रकार के केशों को धोकर साफ करना चाहिए। पृथ्वी को झाड़कर पानी से धोकर सफाई करनी चाहिये। फल, फूल और शलाका को धोकर साफ करना चाहिये, गांव से बाहर निकल कर पृथ्वी वायु द्वारा शुद्ध रहती है। अब मैं आपको शौच के कुछ नियम बतला रहा हूं। सुबह उठकर अपने घर से बहुत दूर आगे जाकर शौच त्याग करना चाहिये। शौच त्यागते समय सिर को कपड़े से ढक लेना चाहिये, सिर को हाथ से नहीं छूना चाहिये सूखे हुये पत्तों से काष्ठ से, बांस के पत्तों से अथवा मिट्टी के बरतन से मल को ढक देना चाहिये। पुनः चुप होकर मिट्टी और ऊपर उठाये हुए जल से शुद्धि करनी चाहिये। दिन में उत्तर की तरफ बैठकर और रात्रि में दक्षिण की तरफ बैठकर मल त्याग करना चाहिये। मल द्वार को बाएँ हाथ से साफ करना चाहिये और दायें हाथ में जल लेना चाहिये। मलद्वार को बायें हाथ से तीन बार मिट्टी लगाकर साफ करना चाहिये। बाएँ हाथ में दसबार मिटटी लगाकर धोने चाहिये, दोनों हाथों में पांच बार मिटटी लगाकर धोने चाहिए। फिर इसके बाद पैरों में मिटटी लगाकर धोने चाहिए फिर आचमन करके पवित्र होना चाहिए। फिर सूर्य, अग्नि, और वायु के उद्देश्य से तीन बार जल त्याग करना चाहिये। ब्राह्मण पुरुषों को तीर्थ में हर समय अपने पास कमंडलु रखना चाहिये। इस जल के बर्तन से अपने छोटे छोटे कार्य पैर इत्यादि धो लेने भी चाहिए। पैरों के धोने के बाद आचमन करके शुभ कार्य करने चाहिए। अपवित्र हाथों से आचमन करना और देव पूजा करने से तीन बार का उपवास रखना चाहिए। कुत्ता और चाण्डाल को छूने पर भी प्रायश्चित करना चाहिए। मनुष्य की हड्डियों को छूने पर भी उपवास करना चाहिए। भक्ति सहित

इस उपवास को तीन रात में अथवा एक रात में करना चाहिये। जो मनुष्य शौच के आचार विचार का पालन नहीं करते हैं वे मनुष्य म्लेच्छ वंश में पैदा होते हैं। जो मनुष्य यज्ञादि कार्य नहीं करते हैं और पाप कर्म करने में तत्पर रहते हैं वे मनुष्य तिर्यक योनि में उत्पन्न होते हैं वे भी मनुष्य शौच के आचार विचारों का पालन करके सभी पापों से छूटकर स्वर्ग को प्राप्त होते हैं। देवता पवित्रात्मा होते हैं। अतः उन्होंने ही शौच के ही ये आचार बतलाए हैं। पितरगण, ऋषियों, ब्राह्मणों, अतिथि सेवा करने वाले, पितरों में श्रद्धाभक्ति रखने वाले, शान्त कोमल स्वभाव वाले मनुष्यों के शुभ कर्मों से सन्तुष्ट होकर उनके सभी मनोरथों को पूरा करते हैं। सत्कर्मी मनुष्य सदा शुद्धि करते हैं। देवता लोग दुष्ट आचरण करने वाले अपवित्र मनुष्यों के वर्जित रखते हैं।

श्री वायुमहापुराण का श्राद्धकल्प नामका अठहत्तरवां अध्याय समाप्त।

(:——:)

उन्यासीवां अध्याय

(श्राद्ध कल्प)

ऋषि बोले–हे सूतजी! अब आप हमको उन ऋषियों की जो बातें और रहगई हैं श्राद्ध के विषय उनको और सुना दीजिए–

सूतजी बोले–हे ब्राह्मणो! अब मैं आपके प्रश्नों का उत्तर देरहा हूँ, आप सब ध्यान मग्न होकर सुनिए। मैं आपको ब्राह्मणों के विषय जो नियम हैं उनको बतला रहा हूँ। ब्राह्मण लोग सभी जातियों में श्रेष्ठ और पवित्र माने जाते हैं। किन्तु इतने पूज्य होने पर भी देवों और पितरों के कार्यों में ब्राह्मणों की परीक्षा लीजाती है। विद्वान पुरुष अनजाने ही ब्राह्मण की श्राद्ध कर्म में परीक्षा ले ले। सिद्ध मनुष्य ब्राह्मणों का वेष धारण करके पृथ्वी पर घूमते रहते हैं। इसी कारण अपने द्वार पर आये हुए अतिथि का हाथ जोड़ कर स्वागत करना चाहिए। इसके बाद पैर धोने के लिए जल देना चाहिए तथा पुनः भोजन खिलाकर सन्तुष्ट करना चहिए।

योगी देवगण भी नाना रूप धारण करके पृथ्वी पर घूमा करते हैं। अतिथि ब्राह्मण को केवल दूध देने से ही अग्निष्टोमयज्ञ का फल प्राप्त होता है। घी दान करने से नेत्रों की ज्योति प्राप्त होती है और सोलह दिन में पूर्ण होने वाले यज्ञ के फल के समान फल मिलता है। अतिथि को मधु देने से अतिरात यज्ञ का फल प्राप्त होता है। जो मनुष्य अतिथि ब्राह्मण को श्रद्धायुक्त सभी प्रकार के भोजन से सन्तुष्ट करके उसका स्वागत करता है। यह सभी यज्ञों के फल को प्राप्त करता है। क्योंकि आये ब्राह्मण का अतिथि सत्कार्य सभी मनोरथो को पूर्ण करने वाला होता है। जो मनुष्य श्राद्ध कार्य में आये हुए अतिथि का निरादर करता हैं। उसे देवता लोग इस प्रकार छोड़ देते हैं जिस प्रकार कि हवन करने पर नीचे गिरी हुई आहुति रह जाती है। देवता, पितरगण और अग्निदेव इन ब्राह्मणों में स्थित होकर श्राद्धों में भोजन करते हैं। ये अतिथि श्राद्धों में अनादर पाकर उस श्राद्ध करने वाले मनुष्य को जला देते हैं। और ये अपना आदर पाकर उसके सभी मनोरथों को पूर्ण कर देते हैं। अतः हमेशा अपने द्वार पर आये हुये अतिथि का आदर प्रेमपूर्वक करना चाहिये। सन्यासी, ग्रहस्थी, बालकगण, लोक से दुखी रहने वाले वैरागीगण और यति इन सभी को अतिथि समझना चाहिये। जो मनुष्य किसी वस्तु की मांग करने के लिये अपने द्वार पर आये उसे भी अतिथि जानना चाहिये। जो मनुष्य बिना किसी मतलब के अपने द्वार पर आये उसे भी अतिथि ही समझना चाहिये। अतिथि का अतिथि श्रेष्ठ अतिथि है वह योगी के समान परम पवित्र पुण्य-दायी माना जाता है। वास्तव में वही सच्चा अतिथि माना जाता है जो कठोर न हो अधिक सन्तान वाला न हो, विद्यावान हो, शुभ आचरण करने वाला हो तथा नीच विचार वाला न हो। जो मनुष्य भूले भटके को, भूखे मनुष्य को, प्यासे थका थके हुये को भोजन खिलाते हैं वे मनुष्य यज्ञके फल के समान फल को प्राप्त करते हैं

भृगुतुंग सरस्वती नदी, गंगाजी, महानदी और अन्य नदियों में स्नान यात्रा करने से मनुष्य के सभी पाप छूट जाते हैं और वे स्वर्ग को प्राप्त करते हैं। घर में किसी की मृत्यु होने पर ब्राह्मणों को दस रात का सूतक लगता है और क्षत्रियों को बारह रात का सूतक लगता है तथा वैश्यों को पन्द्रह रात का सूतक लगता है शूद्रों को एक महीने का सूतक लगता है अतः शूद्र एक महीने के बाद शुद्ध होते हैं सभी जाति की रजस्वला स्त्री तीन दिन में शुद्ध होती हैं। रजस्वला स्त्री, कुत्ता, चाण्डाल, नंगे और मुर्दों के ले जाने वाले व्यक्तियों के छूने पर स्नान करके शुद्ध होना चाहिए। वस्त्रों सहित मिट्टी से बारह बार स्नान करके शुद्ध होते हैं मैथुन करने के बाद भी इसी प्रकार स्नान करके शुद्ध होना चाहिए। मनुष्य को दोनों हाथों को मिट्टी से धोकर शौच करना चाहिए। विद्वान पुरुष को अपने दोनों हाथों को जल से धोकर पुनः मिट्टी लगाकर सब शरीर में स्नान करना चाहिए, फिर दो बार मल द्वार पर मिट्टी लगा कर फिर एक बार मिट्टी लगानी चाहिए। तीन बार मिट्टी लगाकर हाथ पैर धोने चाहिए। सभी जाति के मनुष्यों के लिए शौच के इसी प्रकार के नियम माने जाते हैं। अब मैं आपको गृहस्थाश्रम के मनुष्यों के लिये जो शौच के आचार हैं उन्हें बतलाऊंगा। गृहस्थाश्रम के व्यक्तियों को तीन बार दोनों पैरों में तथा तीन बार दोनों हाथों में मिट्टी लगाकर धोने चाहिए। अपवित्र हाथों में पन्द्रह बार मिट्टी लगाकर धोने चाहिए। मलद्वार को मिट्टी लगाकर धोना चाहिए। सड़क पर पैदल चलने पर भी घर पर आने पर पैरों को पानी से धोकर साफ करने चाहिए। बिना पैर धोकर आचमन करने से मनुष्य को पाप लगता है। हाथ पैरों को धोकर जल का बर्तन नीचे रख कर आचमन करना चाहिये फिर श्राद्ध के निमित्त सभी वस्तुओं को जल से छींटे मार कर शुद्ध पवित्र करने चाहिये श्राद्ध या यज्ञ की सभी वस्तुऐं फूल, तृण और हवन की सामग्रियों को जल से छींटे मार कर पवित्र करे। श्राद्ध कर्म में तथा देव पूजा के कार्य में सभी वस्तुओं को जल

से धोकर काम में लेनी चाहिये। वेदी में उत्तर दिशा की तरफ से वस्तुऐं लानी चाहिए और दक्षिण दिशा की तरफ से समाप्त करनी चाहिए। देवता और पितरों के शुभ कार्यों में दोनों हाथों से पृथ्वी पर पीली सरसों अथवा काले तिल बिछाने चाहिए। जो मनुष्य भूख से पीड़ित तथा नींद से पीड़ित मल, मूत्र का त्याग करने वाले हैं अथवा थूकने वाले हैं वे अपवित्र माने जाते हैं। इसी प्रकार भोजन करके, कपड़े पहन कर, अनजाने में बिना जनेऊ ही भोजन करना चाण्डालों को छूना, पैर को न धोकर भोजन करना इत्यादि इन सभी बातों से मनुष्य अपवित्र माना जाता है। विद्वान पुरुष को उत्तर पूर्व के पवित्र स्थान में बैठ कर उत्तर पूर्व को तरह मुँह करके दोनों हाथों और पैरों को धोकर घुटनों के बीच में हाथों को रखकर बैठे और यज्ञ अथवा श्राद्ध की वस्तुओं को धोवे। उसी समय इन्द्रियों को वश में रखकर तीन घूंट जल को पीये और दो बार मार्जन करके वस्तुओं का सींचन करना चाहिए, इनके बाद आचमन करे, जो मनुष्य इस प्रकार आचमन करते हैं उनके सभी कार्य सफल और सिद्ध होते हैं जो नास्तिक मनुष्य बिना आचमन करके शुभ कार्यों को करते हैं उनकी सारी क्रिया समाप्त हो जाती हैं। भूखे ब्राह्मण को कभी खोटे वचन नहीं कहना चाहिए, उस समय उसको आदर पूर्वक जो कुछ दिया जाता है। वह बिना यज्ञ के ही एक यज्ञ का माना जाता है। श्राद्ध में विद्वान ब्राह्मण को भोजन कराना चाहिये, और मेहनत से पैसा कमाने वाले को, एकान्त प्रेमी को लज्जा शील व्यक्ति को खूब अच्छी तरह से भोजन पका कर पेट भर कर श्रध्दा सहित खिलाना चाहिए। जो मनुष्य श्राध्द में चाण्डाल तथा अन्य नीची जातियों को भोजन खिलाते हैं, वे ब्रह्महत्यारे अथवा दुरात्मा माने जाते हैं। जो मनुष्य एक ही लाइन में ऊँचे और नीचे ब्राह्मणों को बैठा कर भोजन खिलाते हैं वे भी पाप के भागी होते हैं। जो पवित्र ब्राह्मण चारों वेदों का और महाभारत का पाठ करता है उसको श्राध्द में यथा योग्य स्थान देना चाहिए,

इसके बाद जो ब्राह्मण तीनों वेदों का पाठ करे उसको स्थान देना चाहिए। उसके बाद में दो वेद के पाठ करने वाले ब्राह्मण को स्थान देना चाहिए तथा इसके बाद एक वेद के पाठ करने वाले ब्राह्मण को स्थान पद देना चाहिए। पंक्ति में पवित्र जो पंक्ति पावन ब्राह्मण है वे इस प्रकार हैं। वेद के छओं रूपों के पाठ करने वाले, विनुयी योग परायण सभी शास्त्रों में स्वतन्त्र विचार रखने वाले और सदा घूमने वाले पाँच तरहके ब्राह्मणों को पंक्ति पावन जानना चाहिए। इनके बाद नचिकेता की तीनों विधाओं के जानने वाले तथा धर्मशास्त्र के ज्ञाता ब्राह्मण को भी पंक्ति पावन मानते हैं वृहस्पतिजी के शास्त्र के ज्ञाता को भी पंक्ति पावन पुकारते हैं। ये सभी ब्राह्मण पंक्ति पावन कहे जाते हैं। जो ब्राह्मण मनुष्य किसी श्राद्ध कर्म में निमन्त्रित हो कर स्त्री के साथ सम्भोग करता हैं उसके पितर गण उसी के मांस का भोजन करते हैं तथा उसके वीर्य पर सोते है। श्राद्ध में न्योता देकर तथा श्राद्ध में भोजन करके जो मनुष्य स्त्री के साथ समागम करता है उसके पितर गण भी उसके मांस को खाते हैं तथा उसके वीर्य पर स्थित रहते हैं। इसी लिए श्राद्ध करने वाले मनुष्य को ब्रह्मचारी ब्राह्मण को भोजन कराना चाहिये, और श्राद्ध का दान अतिथि को दे देना चाहिए। इनके अलावा योग परायण ब्राह्मणों तथा वीतराग सन्यासी ब्राह्मणों को अथवा बाल खिल्य ब्राह्मणों को श्राद्ध में भोजन कराना चाहिए जो मनुष्य गृहस्थाश्रम में रहने वाले ब्राह्मणों को भोजन खिलाता है वह विश्वेदेवों की पूजा के समान फल को प्राप्त करता है। वानप्रस्थ ब्राह्मणों को भी भोजन खिलाकर सन्तुष्ट करना चाहिये वानप्रस्थ ब्राह्मण के सन्तुष्ट होने पर ऋषि सन्तुष्ट रहते हैं, बाल-खिल्य ब्राह्मणों के सन्तुष्ट से इन्द्र प्रसन्न रहते हैं। यतियों के सन्तुष्ट होने पर स्वयं ब्रह्माजी प्रसन्न रहते हैं। अपने अपने महत्व में ये पाँच आश्रम ही पवित्र माने जाते हैं।

पितरों के श्राद्धों में अथवा देव पूजा या देवकार्य में चार आश्रमों की पूजा होती है। इन चारों आश्रमों से जो परे हो उन्हें कुछ भी दान नहीं करना चाहिए। नीच वृत्ति से अपनी गुजर बसर

करने वाले, अनाचारी, गायन बादन द्वारा जीविका चलाने वाले, रामलीला में राम लक्ष्मण का अभिनय करने ब्राह्मणों वाले को भी श्राद्ध को भी श्राद्ध कर्म में निमन्त्रित नहीं करना चाहिए। श्राद्धों के दिनों में जो मनुष्य नित्य प्रति भोजन करता है ऐसे व्यक्ति को भी श्राद्ध कर्म के भोजन से वंचित रखना चाहिए। जो व्यक्ति नित्य प्रति श्राद्ध में भोजन करता है वह काले रंग का हो जाता है। जो मनुष्य शूद्रों के साथ बैठकर भोजन खाता है वह भी नीच प्रकृति का हो जाता है। ब्राह्मणों के लिए यह सभी कार्य वंचित रखे गये हैं जीव हिंसा करना, जीव इत्यादि के मारने में अपनी शक्ति का दुरुपयोग करना, पशुपालना, गुरु के अतिरिक्त किसी दूसरे की सेवा करना इत्यादि कार्य हैं। असली रूप में वे ही ब्राह्मण हैं जो नित्य ध्यान में रह कर अपना जीवन व्यतीत करते हैं जो मनुष्य झूठे षड़यन्त्र रचने वाले ढोंग बाजी करने वाले, दुर्व्यवहार करने वाले लोभ और अज्ञान वश फल की आशा रखने वाले, विद्या को बेचने वाले हैं उनको श्राद्ध में नहीं रखना चाहिए। वेदशास्त्रों में किसी को दखल नहीं देना चाहिए जो मनुष्य उनमें आक्षेप लगाते हैं वे पाप के भागी होते हैं ऐसे मनुष्यों को भी श्राद्ध में दान नहीं देना चाहिए। जो मनष्य रुपया आदि लेकर किसी को पढ़ाता अथवा रुपया लेने वाला अध्यापक से पढता है ऐसे दोनों व्यक्तियों को श्राद्ध कर्म में भोजन नहीं करना चाहिए। व्यापार करने का कार्य तो वैश्यों के लिए लिखा है। अपनी कन्या के पति को भी श्राद्ध कर्म में भोजन नहीं खिलाना चाहिए। जो मनुष्य व्यर्थ में ही स्त्री के साथ सम्भोग करता है अथवा यज्ञ में हवन करता है इन दोनों मनुष्यों को भी श्राद्ध में भोजन नहीं खिलाना चाहिये। नास्तिक ब्राह्मण को भी श्राद्ध में दान नहीं देना चाहिए। जो मनुष्य अपने लिए भोजन बनाते हैं और देवता तथा अतिथियों के लिए कुछ भी नहीं रखते वे मनुष्य पतित होकर ब्रह्मराक्षस के समान माने जाते हैं। जिन ब्राह्मणों की स्त्रियां रात्रि में दूसरों के साथ व्यभिचार करतीं हैं तथा वो स्वयं भी दूसरी स्त्रियों के साथ व्यभिचार करते हैं इनको श्राद्ध में भोजन नहीं खिलाना चाहिए

वर्णाश्रम धर्म की मर्यादा का पालन न करने वाले, चोरी करने वाले धर्म और श्राद्ध के विरोधी, बिना विचार के सब कुछ यज्ञ में करने वाले मनुष्य पंक्ति दूषक कहलाते हैं अतः इनको श्राद्ध में दान नहीं देना चाहिए। जो ब्राह्मण हाथ पर रख कर खाते हैं तथा सूअर की तरह भोजन करता है तथा बांऐ हाथ से खाता है वह मनुष्य भी पतित माना जाता है पितर गण ऐसे मनुष्य के हाथ का भोजन ग्रहण नहीं करते हैं। श्राद्ध की बची हुई वस्तुओं को स्त्री तथा शूद्र और अनुचर न हों, उनको नहीं देना चाहिए। जो मनुष्य अज्ञानता में इनको दे देते हैं उनका दिया हुआ श्राद्ध पितरों को प्राप्त नहीं होता। इसीलिए श्राद्ध में झूठे बचे हुए अन्न को किसी को नहीं देना चाहिए। जिस प्रकार पितर फल, फूल, मूलों से प्रसन्न रहते हैं उसी प्रकार पितर गण अन्न से तृप्त रहते हैं। जब तक अन्न गरम रहता है तभी तक वह अन्न पवित्र माना जाता है। ठंठा और बासी अन्न अपवित्र माना जाता है। ब्राह्मण को इन्द्रियों को वश में रखकर चुप चाप शान्ति पूर्वक भोजन करना चाहिए। दान करना, हवन करना, दान लेना, भोजन कराना बलिलेना या देना ये सभी कार्य हाथ के अंगूठे के साथ सम्पन्न करना चाहिए। श्राद्ध में इस प्रकार दान करना चाहिए। साधारण रूप से हाथ को घुटनों के भीतर करके आचमन करना चाहिये। श्राद्ध के समय में सिर मुड़े हुए व्यक्ति को, जलधारी व्यक्ति को, कषायवस्त्र धारण करने वाले मनुष्य को श्राद्ध से अलग रखना चाहिये। शिखाधारण करने वाले और त्रिदंडी मनुष्य को श्राद्ध में भोजन कराना चाहिये। जो मनुष्य नित्य व्रत उपवास रखते हैं और योगभ्यास में लगे रहते हैं देवताओं की पूजा करते हैं, ऐसे ब्राह्मण महान होते हैं प्राणी उनके दर्शन मात्र से ही पवित्र हो जाते हैं। व्यक्त और अव्यक्त सभी तरह के पदार्थ उनके वश में रहते हैं। श्रेष्ठ योगीजन महात्माओं के मोक्ष इत्यादि सभी ज्ञान उनके अधिकार में रहते हैं। इसीलिए उन योगी श्रेष्ठ महात्माओं में श्रद्धाभक्ति रखने वाला व्यक्ति सदा सुखी रहता है

जो योगी श्रेष्ठ जन ऋग्वेद को जानता है वह सभी वेदों को जानता है और जो यजुर्वेद को जानता है वह सभी यज्ञों को जानने वाला होता है। जो मनुष्य सामवेद को जानता है वह सभी तरह से ज्ञान वान होकर सभी कुछ जानता है।

[श्री वायु महापुराण का श्राद्ध कल्प नाम का उन्यासीवां अध्याय समाप्त हुआ]

—❀—

अस्सीवाँ अध्याय

(श्राद्ध में दान के फल)

बृहस्पतिजी बोले—हम आपको अब श्राद्ध में दिये दान और उसके फलों को बतलायेंगे। जो मनुष्य श्राद्ध में अन्न का दान करता है। वह मनुष्य स्वर्ण के बने हुए दिव्य सुन्दरी अप्सराओं से भरे हुए विमान को प्राप्त करता है जो मनुष्य श्राद्ध में औरन के लिए नया वस्त्र दान करे उसको ऐश्वर्य, सुन्दरता, पुत्र और दीर्घायु मिलती है। जो मनुष्य श्राद्ध कर्म में जनेऊ का दान करता है और सभी श्रेष्ठ पवित्र ब्राह्मणों को पानी पिलाते हैं, उसे ब्रह्म विद्या दान का फल प्राप्त होता है। जो मनुष्य श्राद्ध के दिन कमंडुल दान करते हैं उसको गौ दान का फल प्राप्त होता है जो मनुष्य श्राद्ध के समय चक्राकार चिन्ह से बना हुआ कमण्डुल दान करता है, उसके सभी मनोरथ सफल होते हैं। जो मनुष्य सुन्दर फूलों से सजी हुई शय्या दान करते हैं उसकी वह दान दी हुई उत्तम शय्या परलोक तक उसके साथ २ चलती है। श्राद्ध के दिन हीरे, मोती और रत्नों से सजी हुई शय्या दान करता है उसे स्वर्ग प्राप्त होता है। एक हजार घोड़ों का दान करने से, एक हजार हाथियों के दान करने से तथा सौ रथों के दान करने से वह मनुष्य योगिनी के साथ निवास करता है। जो मनुष्य श्रध्दा सहित पितरों के निमित्त दीपक जलाते हैं उसे एक हजार निष्कों के दान का फलप्राप्त होता है सभी प्राणियों के एक दूसरे

प्राणों की रक्षा का दान करना चाहिये, क्योंकि प्राणदान के समान कोई दूसरा दान नहीं है। श्राद्धों में सोने के बर्तनों का दान करना चाहिये। श्राद्ध के समय सभी प्रकार के खाद्य पदार्थों से भरा हुआ चाँदी का बर्तन दान करने से श्राद्ध करने वाले व्यक्ति के सभी मनोरथ पूर्ण होते हैं। जो व्यक्ति श्राद्ध में व्याही हुई गाय के साथ दूध दुहने के पात्र को दान करने से उसे बहुत सी गायों के पुण्य का फल मिलता है। सरदी के मौसम में जो व्यक्ति अग्नि और सूखे ईंधन को दान करता है वह मनुष्य हर समय विजयी होता है। श्री सम्पन्न होकर सुखी रहता है। श्राद्ध के समय फूल मालाओं को और सुन्दर बर्तनों को दान करना चाहिये। जो मनुष्य आसन, शय्या, प्रचुर भूमि और विविध तरह के वाहन दान करत है उसको परम सुख की प्राप्ति होती है उसको परम सुन्दर सुन्दरियाँ सुख पहुँचाती है। है। जो मनुष्य सभी तरह के श्राद्धों के समय इन सभी वस्तुओं को दान करता है उसको अश्वमेध यज्ञ के फल के समान फल प्राप्त होता है।

श्राद्ध के समय जो मनुष्य घी से भरे हुये बर्तनों का दान करता है वह सुन्दर रूप, शक्ति और बुद्धि को प्राप्त करता है। श्राद्ध के समय याचक के मनचाही वस्तु का दान करने से पुण्डरीक यज्ञ का और सुन्दर मकान का दान करने से राजसूर्य यज्ञ का फल प्राप्त होता है। फलों से लदे हुये वन का दान करने से सुगन्धित पदाथ प्राप्त होते हैं। कूओं, बाग, बगीचों, तालाबों, गौशालाओं और गृहों के दान करने से दानी मनुष्य स्वर्ग में बहुत दिन तक निवास करता है। श्राद्ध काल में रत्नों से जड़े हुये बिस्तर और शय्या का दान करता है उससे पितर गण परम प्रसन्न रहते हैं। और दानी मनुष्य बहुत समय तक स्वर्ग में निवास करते हैं। ऊनी वस्त्रों को रेशमी, सूती वस्त्रों को कम्बलों को, चर्म, मृग की खाल को दान करने से सौत्रातृपेय यज्ञों का फल प्राप्त होता है। बहुत सी सुन्दर

स्त्रियां उनके पुत्र उनके वश में रहते हैं। वह मनुष्य सदा निरोग रहकर सुख प्राप्त करता है।

जो मनुष्य रेशमी वस्त्र, सूती वस्त्र, सुन्दर साड़ियों को श्राद्ध में दान करता है। उस मनुष्य के सभी मनोरथ सिद्ध होते हैं। वस्त्र देवताओं को प्रिय हैं। उस सबसे अच्छे वस्त्रों के अभाव में कोई भी कार्य पूरा नहीं होता है। कपड़ों के बिना न तो यज्ञ पूरा होता है इस लिए श्राद्ध के समय वस्त्रों का दान करना चाहिए। वस्त्रों के दान करने वाले को वेदों, यज्ञों और तपस्या का फल प्राप्त होता है जो मनुष्य श्राद्ध के अवसर पर सभी इन्द्रियों को वश में रख कर वस्त्रों का दान करता है उसके सभी मनोरथ पूर्ण होते हैं, वह मनुष्य सभी कामनाओं सहित यज्ञ का फल प्राप्त करता है श्राद्ध में सत्तू, पेठा, घी, मधु, खिचड़ी, दूध और दूध से बनी मिठाई तथा सुन्दर पूआ दान करता है वह अग्निष्ट होम यज्ञ का फल प्राप्त करता है। वर्षा ऋतु में श्राद्ध के समय मघा नक्षत्र में दही, दूध, माखन, घी, मट्ठा तथा तरह तरह के पकवानों का दान करने से पितरगण अधिक प्रसन्न होते हैं। श्राद्ध करते समय घी के साथ ब्राह्मणों को भोजन करवाना चाहिए। भूमि पर घी छोडना चाहिए, गया तीर्थ में श्राद्ध के अवसर पर हाथी दान करने से उसके पितर तृप्त होते हैं। घृत, दूध, खिचड़ी, मीठा, मधु, मूल, फल, चिउड़ा मसूर, सत्तू धान के लावे, पूआ, कुत्याष के दान करने से सभी पितर गण तृप्त होते हैं। श्राद्ध में घी तथा मीठे मीठे सुन्दर खाने की वस्तुओं को दान करने से तथा दही के सत्तू को दान करने से मनुष्य को क्षय फल प्राप्त होता है जो मनुष्य श्रद्धा से नये अन्न का श्राद्ध में दान करता है वह सभी प्रकार के मनोरथों को प्राप्त करता है। श्राद्ध के अवसर पर विश्व-देव और सोम का भाग निकालना चाहिए और गैंड़े के मांसकी बलि देनी चाहिये गैंडे के सींग को निकाल देना चाहिए। अतिथियों को हाथ जोड़कर पहले आसन चाहिए, तथा फिर भोजन करना चाहिए, ऐसा करने से मनुष्य को यज्ञों का फल मिलता है। अपने द्वार आये हुये।

इस प्रकार अतिथि को भोजन कराने से अक्षय फल प्राप्त होता है। श्राद्ध में अन्न दान करने से तीन करोड़ सुन्दर कन्यायें प्राप्त होती हैं। इस मृत्यु लोक में अन्न दान से बढ़कर कोई दूसरा दान नहीं है। अन्न से ही पूरी पृथ्वी पर सभी जीव उत्पन्न होते हैं और अन्न ही से मनुष्य जीवित रहते हैं अतः अन्न ही मनुष्य को जीवन दान देते हैं। मृत्यु लोक में जीवन दान के समान भी कोई दूसरा दान नहीं है। अन्न से ही सारा संसार जीवित है। अन्न से ही ये सारे लोक प्रतिष्ठित हैं, अन्न दान से ही वे वर्तमान हैं, अन्न ही साक्षात ब्रह्म है, उन्हीं से ही यह सारा संसार व्याप्त है। अतः इसी कारण अन्नदान के समान और कोई दान नहीं है। पितरों में जो मनुष्य श्रद्धा रखते हैं उनको जो कुछ संसार में है सभी पदार्थ शीघ्र ही सुलभ होते हैं। मनुष्य को आये हुये अतिथि को सम्मान पूर्वक आश्रय देना चाहिये, हजारों देवगण आतिथ्य को प्राप्त करने के लिये इस पृथ्वी पर नाना रूपों में घूमा करते हैं। जो मनुष्य ऊपर लिखी सभी वस्तुओं का श्राद्ध में श्रद्धा सहित दान करता है, वह पृथ्वी का राजा होकर एकच्छत्र राज्य करता है, और इसे संसार के सभी सुख प्राप्त होते हैं। ये दान परम धर्म कहलाते हैं। विद्वानों पुरुषों ने इनका बहुत आदर किया है। इस प्रकार के दान करके राजा लोग राज्य प्राप्त करते हैं गरीब मनुष्यों को धन प्राप्त होता है, रोगी मनुष्य निरोग होकर सुख प्राप्त करते हैं पितरगण उनके सभी कार्यों को पूरा करते हैं।

श्री वायु महापुराण का श्राद्ध में दान के फल नाम का अस्सीवाँ अध्याय समाप्त हुआ

इक्यासीवाँ अध्याय

[विशेष तिथियों में श्राद्ध के करने का फल]

बृहस्पति बोले—अब मैं आपको नित्य, नैमित्तिक और काम्य श्राद्धों का वर्णन सुनाऊँगा, और श्राद्ध कर्म में किस प्रकार पूजन करना चाहिये यह भी बताऊँगा। तीनों अष्टिकाओं के करने से पुत्र

और धन सम्पत्ति प्राप्त होते हैं। श्राद्ध कर्म में पूर्व पक्ष और कृष्ण पक्ष शुभ माना जाता है। इन तीनों अष्टिकाओं के इस प्रकार नाम है। पहली चित्री है, दूसरी प्राजापत्य है और तीसरी वैश्वदेवी के नाम से पुकारी जाती है। पहली चित्री को पूओं से दान करना चाहिये दूसरी प्राजापत्य को मांस का दान करना चाहिये, तथा तीसरी वैश्वदेवी को शाकों का भोजन देना चाहिये। इस प्रकार इन तीनों अष्टिकाओं के यह नियम बतलाये हैं।

पितरों के लिये अन्वष्टका श्राद्ध करना चाहिये, इसके अतिरिक्त चौथी अष्टका मिले तो वह भी श्राद्ध मनुष्य को करना चाहिये। विद्वान मनुष्य को इन अष्टिकाओ में बहुत धन खर्च करके श्राद्ध करना चाहिये इस प्रकार करने वाला मनुष्य इस लोक और परलोक दोनों में सुख प्राप्त करता है। इनकी पूजा करने वाले मनुष्य सभी जगह सुखी रहते हैं और नास्तिक मनुष्य सभी जगह दुखी रहते हैं। पितरगण श्राद्धों के अवसर पर मनुष्यों के पास इस प्रकार आते हैं जिस प्रकार कि गायें नदी या सरोवर में पानी पीने जाती हैं विशेष तिथियों पर देवता भी इस प्रकार मनुष्यों के पास आते हैं। वे पितरगण देवताओं से पूजी जाने वाली इन अष्टकाओं के पास नहीं जाते हैं। जो मनुष्य इन अष्टकाओं में पितरों की पूजा नहीं करते हैं उनका संसार में यह जन्म व्यर्थ ही जाता है। उन्हें जो कुछ पहला प्राप्त रहता है वह भी क्षीण होजाता है। जो मनुष्य इन श्राद्धों के दिनों में श्राद्ध कर्म करते है उनको स्वर्ग प्राप्त होता है और जो मनुष्य ऐसा नहीं करते वे अधम योनि में जन्म लेते हैं। जो मनुष्य पूर्णमासी के दिन श्राद्ध करते हैं उनको धन सम्पत्ति, ऐश्वर्य, सन्तान पुत्र पौत्रादि, बुद्धि पुष्टि, स्मरण शक्ति प्राप्त होते हैं। प्रतिपदा के दिन श्राद्ध करने से धन सम्पत्ति का लाभ होता है, दौज की तिथि को करने से राज्य प्राप्त होता है, तीज को करने से शत्रुओं का नाश होता है और उनके पापों को नष्ट करता है चतुर्थी को करने से शत्रुओं को कूट चालों का ज्ञान प्राप्त होता

छठ के दिन श्राद्ध कर ने से देवता पितर लोग उन पर प्रसन्न रहते हैं। सप्तमी के दिन श्राद्ध करने से मनुष्य को बड़े-बड़े यज्ञों का फल प्राप्त होता है। अष्टमी के दिन श्राद्ध करने से सभी सिद्धियां मनुष्य को प्राप्त होती हैं नवमी के दिन करने से मनुष्य को धन, सम्पत्ति, ऐश्वर्य मन चाही स्त्री प्राप्त होती हैं। दसवीं के दिन श्राद्ध करने से मनुष्य को ब्रह्म लक्ष्मी प्राप्त होती हैं। एका दशी को श्राद्ध करने से सभी वेदों का ज्ञान प्राप्त होता है, एकादशी का दान सभी दानों में श्रेष्ठ माना जाता है। उसके करने से मनुष्य के सभी पाप नष्ट हो जाते हैं। द्वादशी के दिन श्राद करने से अपने देश की भलाई होती है और अटूट अन्न प्राप्त होता है त्रयोदशी के दिन श्राद्ध करने से मनुष्य को धन, सन्तान, बुध्दि, पशु, दीर्घायु, ऐश्वर्य तथा निरोग काया प्राप्त होते हैं। चौदस के दिन श्राध्द करने से उनके सभी पितरगण तृप्त होते हैं। जिसके घर से जवान मनुष्य की मृत्यु हो जाती है अथवा हथियारों से जो मरते हैं उनके घर वालों को चतुर्दशी के दिन श्राद्ध करना चाहिए। अमवास्या के दिन श्राद्ध करने से मनुष्य को सभी सुख प्राप्त होते हैं। जिन मनुष्यों के तीन कन्याओं के बाद पुत्र होता है, अथवा जोडले बच्चे पैदा होते हैं उनको अमावस्या के दिन श्राद्ध करना चाहिए। इस प्रकार श्राध्द करने से मनुष्य को स्वर्ग प्राप्त होता है। अमावस्या के दिन श्राध्द के निमित्त पहले ब्राह्मण को भोजन कराना चाहिए, तथ फिर चन्द्रमा के निमित्त तर्पण करना चाहिए, इस प्रकार तर्पण करने से बहुत पुण्य मिलता है, चन्द्रमा तृप्त होकर तीनों लोकों को धारण करते हैं। पितरों में भक्ति रखने वाले सत्यव्रती व्यक्ति की सिध्द, धारण, गन्धर्व गण नित्य वन्दना किया करते हैं। इनके साथ साथ हजारों सुन्दरी अप्सरायें अपने ना , गान से, फल फूल तथा वस्त्रों से अनेक प्रकार से उसको सन्तुष्ट करते हैं। जो मनुष्य पितरों में रखते है तथा अमावस्या के दिन भक्ति पूर्वक दान करते हैं, उस मनुष्य को

सभी सुख प्राप्त होते हैं अमावस्या के दिन पितरगण प्रत्यक्षः रूप में श्राद्ध का अन्न ग्रहण करते हैं। मघा नक्षत्र में पितरों का श्राद्ध करना चाहिए, इस नक्षत्र में करने से पितरों को अभीष्ट सिद्धि प्राप्त होती है, इस नक्षत्र के श्राध्द को अक्षय कहते हैं। इसी कारण विद्वान ब्राह्मण लोग मघा नक्षत्र में ही पितरों का श्राध्द करते है। मनुष्य के इस प्रकार श्राध्द करने से पितर गण उसको सभी प्रकार से सुख देते हैं। जो मनुष्य देवता और पितरों के श्रध्दादि कार्य तथा पूजा श्रध्दा पूर्वक करते हैं उनको स्वर्ग प्राप्त होता है।

श्री वायु महापुराण का विशेष तिथियों में श्राध्द कर्म का फल नाम का इक्यासीवाँ अध्याय समाप्त।

(:——:)

बियासीवां अध्याय

(विशेष नक्षत्रों में श्राध्द करने का फल)

बृहस्पति ने कहा--इसके बाद अब मैं आपको यह बतलाऊंगा कि विशेष नक्षत्रों में अलग अलग श्राध्द करने का क्या फल प्राप्त होता है, इनके विषय में यमराज ने शिवविन्द से इस प्रकार वर्णन किया है सो मैं आपको सुनाऊँगा। मनुष्य को कृत्तिका नक्षत्र में श्राद्ध करना चाहिए, और अग्नि की स्थापना करनी चाहिए इस प्रकार श्राद्ध दान करने से मनुष्य के सभी पाप नष्ट हो जाते हैं। मनुष्य को रोहिणी नक्षत्र में श्राध्द करने से शुभ सन्तान की प्राप्ति होती है। मनुष्य को मृगशिरा नक्षत्र में कराना चाहिए, इस प्रकार श्राध्द करने से मनुष्य को तेज यश प्राप्त होता है मनुष्य को आर्द्रा नक्षत्र में श्राद्ध नहीं करना चाहिए, इस नक्षत्र में दुष्ट स्वभाव के ही मनुष्य श्राध्द करते हैं, पुनर्वसु नक्षत्र में मनुष्य को श्राद्ध करने से राज्य और पुत्र प्राप्त होते हैं उसको धनधान्य पुत्र पौत्रादि सभी सुख प्राप्त होते हैं। पुष्य नक्षत्र में मनुष्य को सन्तोष प्राप्त होता है। आश्लेषा नक्षत्र में पितरों का श्राद्ध करने से वीर सुयोग्य पुत्र पैदा होते है।

फाल्गुनी नक्षत्र में मनुष्यों को श्राद्ध करने से सौभाग्य प्राप्त होता है उत्तरा नक्षत्र में श्राद्ध करने से मनुष्य अपने समाज में प्रतिष्ठित होता है और अच्छे पुत्र को प्राप्त करता है। जो मनुष्य हस्त नक्षत्र में पितरों का श्राद्ध करते हैं वह सभी श्रेष्ठ जनों में पूज्य माने जाते हैं जो चित्रा नक्षत्रमें श्राद्ध दान करते हैं उनको वस्त्र सुन्दर मिलते हैं जो मनुष्य स्वांति नक्षत्र में श्राद्ध करता है उसको यश लाभ प्राप्त होते हैं विशाखा नक्षत्र में पितरों का श्राध्द करने से मनुष्य को राज्य होता है जो मनुष्य ज्येष्ठा नक्षत्र में पितरों का श्राध्द करते हैं उनको सबसे उत्तम स्थान प्राप्त होता है मूल नक्षत्र में जो मनुष्य पितरों को श्राद्ध दान करते हैं वह मनुष्य निरोग होकर दीर्घायु प्राप्त करता है, आषाढ़ा नक्षत्र में श्राध्द करने से महान यश प्राप्त होता है, उत्तराषाढ़ा नक्षत्र में श्राध्द दान करने से मनुष्य शोक रहित सदैव सुख पाते हैं श्रवण नक्षत्र में श्राद्ध दान करने से परम गति प्राप्त होती है। धनिष्ठा नक्षत्र में श्राद्ध दान करने से मनुष्य को राज्य तथा अधिक धन प्राप्त होता है, अभिजित नक्षत्र में श्राध्द करने से मनुष्य को सभी वेदों का उनके अंगों सहित ज्ञान प्राप्त होता है, शतभिष नक्षत्र में दान करने से सभी सिध्दियां प्राप्त होती हैं। पूर्व भाद्रपद नक्षत्र में पितरों के हेतु के लिए श्राध्द दान करने से उत्तम फल प्राप्त होता है, उत्तरा भाद्रपद नक्षत्र में पितरों का श्राध्द करने से मनुष्य को हजारों दूध देने वाली गायें प्राप्त होती हैं। रेवती नक्षत्र में श्राध्द करने से बहुतसा द्रव्य प्राप्त होता है। अश्विनी नक्षत्र में श्राध्द करने से बहुत से घोड़े प्राप्त होते हैं और भरणी नक्षत्र में श्राध्द करने से उत्तम आयु प्राप्त होती है इस प्रकार शशबिन्दु ने श्राध्द का विधि पूर्वक पालन करके सारी पृथ्वी का राज्य प्राप्त किया था। सभी मनुष्यों को श्रध्दा सहित इस प्रकार विधि पूर्वक श्राध्द का पालन करना चाहिए, ऐसा करने से मनुष्य को सभ सुख प्राप्त होते हैं।

विशेष नक्षत्रों में श्राध्द करने का फल नाम का व्यासीवाँ अध्याय समाप्त

तिरासीवाँ अध्याय

[श्राध्द में भिन्न २ समय में तृप्ति के साधन, भूत विशेष द्रव्य, गया में श्राध्द के फल तथा ब्राह्मण की परीक्षा]

वायु बोले—हे श्रेष्ठ देव ! पितरगण किस प्रिय वस्तु से थोड़े दिन तक तृप्त होते हैं और कौनसी वस्तु से बहुत दिन तक तृप्त रहते हैं और किस वस्तु से अनन्त समय तक तृप्त रहते हैं।

वृहस्पति बोले—हे विप्र ! अब मैं आपके पूछे हुये प्रश्नों का उत्तर दे रहा हूं, आप सब ध्यान पूर्वक सुनिये। श्राद्ध के महात्म्य को जानने वाले श्राद्ध में कौन कौन से हविष द्रव्य पदार्थ फल देने वाले होते हैं। जो मनुष्य श्राद्ध में तिल, जौ, उड़द, जल, मूल और फलों को दान करते हैं, उस के दान से उनके पितर गण एक महीने तक तृप्त रहते हैं । श्राद्ध में मछली के मांस को दान करने से पितर गण दो महीने तक तृप्त रहते हैं, हिरण के मांस को दान करने से पितर तीन महीने तक तृप्त रहते हैं। खरगोश के मांस को दान करने से चार महीने तक सन्तुष्ट रहते हैं। श्राद्ध में पक्षी के मांस दान करने से पितर गण पांच महीने तक तृप्त रहते हैं, शूकर के मांस को दान करने से छः महीने तक पितरगण तृप्त होते हैं, बकरे के मांस को दान करने से सात महीने तक श्राध्द कर्त्ता के पितर गण तृप्त रहते हैं, पृषत के मांस का दान करने से पितर गण आठ महीने तक तृप्त रहते हैं। रुरु के मांस को दान करने से नौ महीने तक पितर तृप्त रहते हैं । गवय के मांस को दान करने से दस महीने तक पितर गण तृप्त रहते हैं और कछुये के मांस को करने से पितरों को ग्यारह महीने तक सन्तुष्टि होती है श्राध्द में गोरस का दान करने से श्राध्द कर्त्ता के पितर गण एक वर्ष तक तृप्त रहते हैं। श्राद्ध में मधु, घी, दूध से बने हुये पदार्थ तथा दूसरे गौरस से भी पितरगण एक वर्ष तक तृप्त रहते हैं। श्राध्द में गैंड़े के मांस को दान करने से पितर गण अनन्त समय तक तृप्त रहते हैं। काले बकरे के मांस को तथा गोह के मांस का दान करने से पितर-

तृप्त होते हैं, अब मैं आपसे पितरों की गाई हुई गाथाओं का वर्णन करूंगा आप सावधान होकर सुनिए। पितरगण कहते हैं कि हमारे कुवंश में कोई सुपात्र पुत्र पैदा हो, जो त्रियोदशी के दिन हाथी की छाया में मधु, घी, दूध के बने पदार्थ और अन्नों का दान करे, और वर्षा ऋतु के मघा नक्षत्र में बकरे के मांस की बलि दे। पितरगण बहुत से पुत्रों की अभिलाषा करके कहते हैं कि उनमें से एक पुत्र यदि गया कर आयेगा, और एक पुत्र कन्यादान कर देगा तथ एक पुत्र हम लोगों के उद्देश्य से नीले बैलों को दान कर देगा तो हम लोगों का उद्धार होजायगा, हमारी सभी इच्छायें पूरी हो जायँगीं।

वायु बोले—हे देव! आप हमको गया तीर्थ के महात्म्य के विषय में बतलाइये पितरों के निमित्त वहां पर जो कार्य करते हैं उसका क्या पुण्य होता है आप उसके विषय में हमको विस्तार सहित बतलाइये।

वृहस्पति बोले—जो मनुष्य एक साल में जाकर गयामें श्राद्ध दान करता है उससे उसके सभी मनोरथ सिद्ध होते हैं और वह स्वर्ग को प्राप्त करता है। यदि मनुष्य गया में तीर्थ यात्रा करके आता है और श्रद्धा सहित श्राद्ध करता है उसके भी सभी मनोरथ सिद्ध होते हैं और वह मोक्ष प्राप्त करता है। मनुष्य को गया जाने से पूर्व अपने गाँव की गेरुआ वस्त्र पहन कर परिक्रमा करनी चाहिए फिर दूसरे गांव में जाकर श्राद्ध से बचा हुआ भोजन करना चाहिए। परिक्रमा के समय किसी का दान नहीं लेना चाहिए, श्राद्ध करने वाले को गया यात्रा करते समय केश दाढ़ी मूँछ आदि नहीं मुड़वाने चाहिए। श्राद्ध में लोभ नहीं करना चाहिए, क्योंकि लोभ करने से यात्रा का फल नहीं मिलता है। गया में पहुँच कर ब्रह्म कुण्ड, प्रभास, ब्रह्मवेदी और प्रेत पर्वत पर विधि पूर्वक श्राद्ध करना चाहिए। उत्तर दिशा में मैनाक पर्वत की श्रेणियों पर जो मानस तीर्थ है उस पर श्राद्ध करना चाहिए, उत्तर में कनखल और दक्षिण में मानस तीर्थ में स्नान करके श्राद्ध करने से पितरों का शीघ्र ही उद्धार होता है, स्वर्ग, पाताल और मृत्यु लोक में इन तीर्थों के समान दूसरा तीर्थ नहीं है। श्रेष्ठ गति पाने की

इच्छा रखने वाले प्राणियों को इन तीर्थों में जाकर अपनी सद्गति के लिये तथा अपने पितरों के उद्धार के लिये अवश्य जाकर श्राद्ध करना चाहिये। इन तीर्थों का प्रभाव अकथनीय है स्वर्णदान से अभय प्राप्त होता है। वस्त्र दान से मोक्ष मिलता है। अन्नदान से शारीरिक पीड़ा का विनाश होता है। अश्वदान से सम्पूर्ण मनोरथों की सिद्धि होती है।

सबसे पहले गदाधर तीर्थ का दर्शन करके धर्मारण्य की यात्रा करे, फिर मंतग में गदाधर के दर्शन करके नारायण का ध्यान करे। वहां पर श्राद्ध करने से करोड़ों वंशों का उद्धार हो जाता है। श्राद्ध के समय जिन ब्राह्मणों को न्योता दिया जाय उन्हें मनुष्य नहीं समझे, उनको सन्तुष्ट करने पर पितरगण और देवतागण सभी सन्तुष्ट होते हैं ? हे राजेन्द्र ? उन ब्राह्मणों के कुल, शील, विद्या तपस्या आदि का विचार करके पूजा करनी चाहिए, उनके पूजित होने पर मुक्ति प्राप्त होती है जो ऐसा करता है उसके सभी मनोरथ सफल होते हैं और वह मोक्ष प्राप्त करता है। हे राजा। गयाकूप में अपने जाति के वर्ण के मित्र, परिवार, और सुहृदय जो भी हों सबके लिए नियम पूर्वक पिण्डदान करना चाहिये जिनसे वे स्वर्ग प्राप्त करते हैं जिनके नाम और गोत्र नहीं मालूम हैं उनका मन्त्र निम्न प्रकार है:—

"हमारे पिता और माता के वंश में उत्पन्न हमारे गुरु, श्वसुर, भाई, विरादरी और अन्य जो भी बन्धु बान्धव हों, जिनकी मेरे कुटुम्ब में पिण्ड प्राप्त करने की आशा नष्ट हो गई हों, जो स्त्री पुत्र आदि से हीन हों, हमारे कुल में ज्ञात और अज्ञात रूप से उत्पन्न हुए हों बिना रूप वाले हों, या रोगी हों, जिनकी क्रियाऐं नष्ट होगई हों जो पूर्व में दुराचारी रहे हों या जिनका गर्भ में ही नाश होगया हो उन सबों के उद्देश्य से दिया गया यह पिण्ड उनको अक्षय तृप्ति प्रदान करे।"

हे परम बुद्धिमान राजा गया क्षेत्र में पिण्डदान तिल के बगैर नहीं करना चाहिए, अपने गोत्र के अन्य पितरों के लिये भी यही करना चाहिये

ब्रह्म हत्या करने वाले कृतघ्न एवं महा पापी लोग भी गया में पिण्ड दान करने पर स्वर्ग को प्राप्त होते हैं। ब्रह्महत्यारे, मदिरा पान करने वाले, बालक, बृद्ध एवं गुरु से द्रोह करने वाले, यदि गया की यात्रा करते हैं तो उनके पाप नष्ट हो जाते हैं। जिसको नाम लेकर पिण्डदान दिया जाता है वह शाश्वत ब्रह्मपद को प्राप्त करता है। त्रिलोकी में गया के समान कोई तीर्थ नहीं है। गया के प्रभाव से मनुष्य जो नरक को जाने वाले हैं वह स्वर्ग को चले जाते हैं पितर लोग यह शुभकामना किया करते हैं कि हमारे कुल में ऐसा कोई सन्मार्गी पुरुष या पुत्र उत्पन्न हो जो गया की यात्रा करे और हमें पिण्ड का दान करे। मकर संक्रान्ति पर चन्द्र और सूर्य ग्रहण के अवसर पर पर, पिटपक्ष में और चैत्रमास में पिण्डुदान का महान फल है। अधिक मास में, जन्मदिन में शुड और गुरु के अस्त होने पर तथा बृहस्पति के सिंह राशि पर आने पर श्राद्ध कदापि न छोड़े। बुद्धिमान लोग सदा ही गया में पिण्डदान करते हैं। हे पुत्र ? गया में पितरों की निधन तिथि के दिन श्राद्ध करने का अक्षय फल होता है। वहाँ उस समय जप, तप, हवन का भी अक्षय फल होता है।

गौरी पन्ति में उत्पन्न पुत्र इक्कीस पीढ़ी को पवित्र करता है। मामा के परिवार में छः को पवित्र करता है। अब वृष का फल सुनाता हूं। वृष का उत्सर्ग करने वाला दस पहले, दस बाद के पितरों को पवित्र करता है। जल से तैर कर पृथ्वी पर आने वाले वृष की पूँछ से गिरने वाले जलविन्दुओं से वृष के उत्सर्ग कर्म में जो वस्तुयें दान दी जाती हैं उससे पितरों को अक्षय फल प्राप्त है इस तरह वृष के अन्त तक लांगुल आदि से गिरने वाले जल से जो वस्तुऐं स्पर्श करते हैं उन सबसे पितरों को अक्षयफल प्राप्त होताहै। वह वृष अपने सींगों और खुरों से जो पृथ्वी खोदता है, वह पृथ्वी अक्षय मधु की नहर के रूप में पितरों को प्राप्त होती है। एक हजार नल्व में विस्तृत तड़ाग के खजाने से भी अधिक तृप्ति वृषोत्सर्ग से पितरों को

होती है। श्राद्ध में तिल गुड़ को मिलाकर, तिल और मधु को मिलाकर तथा जो मधु से श्राद्ध दान करते हैं इन सबसे अक्षय फल प्राप्त होता है।

बृहस्पति बोले—मनुष्य को सदा श्राद्ध दान में ब्राह्मणों की परीक्षा नहीं लेनी चाहिये, ब्राह्मणों की परीक्षा दैवकर्म और पितर कर्म में ली जाती है। सभी वेदाभ्यासी मनुष्य, वेदों के पारगामी, पंक्ति पावन, भाष्य के जानने वाले, व्याकरण को जानने वाले, पुराण और धर्म शास्त्र के ज्ञाताओं, नचिकेता की तीनों विद्याओं को जानने वाले, पंचाग्नि के उपासक, वेदों के छः अंगों को जानने वाले, त्रिसुपर्ण, ब्रह्मज्ञानियों का पुत्र, छन्दोग ज्येष्ठसाम का जानने वाले सभी पुण्यतीर्थों में मुख्य मुख्य में अवभृथ स्नान करने वाले शीघ्र ही किसी व्रत से निवृत होने वाले, अपने अपने कर्मों में निरत रहने वाले क्रोध रहित शान्तिमय ब्राह्मण को श्राद्ध में निमन्त्रण देना चाहिए। जो हमेशा धर्म के दस लक्षणों का पालन करते हैं और अपने कर्म में निरत रहते हैं उनको श्राद्ध निमन्त्रण देना चाहिए, ऐसे ब्राह्मण पंक्तिपावन होते हैं इनको दान देने से अक्षय फल प्राप्त होता है योग मार्ग में अनुरक्त श्राद्ध रखने वाले वर्णाश्रमधर्म की मर्यादा रखने वाले सभी जातियों में श्रेष्ठ ब्राह्मण ही हव्य और कव्य सभी कार्यों में उत्तम कहे गये हैं जिन्होंने ऐसे ब्राह्मणों की पूजा करली, उन्होने तीनों देवों की पूजा करली। ऐसे ब्राह्मणों की पूजा करने वाला मनुष्य पितरों के साथ समस्त लोकों की पूजा का फल प्राप्त करते हैं।

योग धर्म सभी धर्मों में श्रेष्ठ कहा गया है अब इसके बाद अपंक्ति पावन ब्राह्मणों के विषय में सुनिये। धूर्त, शराबी, यक्ष्मा रोग से ग्रसित, कुरुप, पशु को पालने वाले, गांव में दूत या सेवक का काम करने वाले, व्यवसायी, किसी के स्थान को जला देने वाला, किसी को विष देने वाला छिनाले से उत्पन्न होने वालों का अन्न खाने वाले, सोम रस का विक्रय करने वाले, समुद्र की यात्रा करने वाला, दुष्ट,

चमड़े वाले, तेल का व्यापार करने वाले, कूटनीतिज्ञ, पिता के साथ विवाद, जिसके घर में दूसरा घरस्वामी हो, शिल्पजीवी हो, लंपट, चोर धन के लोभ से बिना पर्व के ही अमावस्या आदि के दिन होने वाले अनुष्ठानों को करा देने वाले, मित्रों के साथ द्रोह करने वाले, झुण्ड बनाकर चलने वाले, नास्तिक, वेद विहीन, उन्मत्त, हिजड़ा दुष्ट स्वभाव वाले गर्भी गर्भ हत्या करने वाले, गुरू की शय्या पर शयन करने वाले वैद्यक से जीविका चलाने वाले, ब्रह्मविद्या और तपस्या को बेचने वाले, परस्त्री गमन करने वाले, इन सब को दान देने से दान का समस्त फल नष्ट होजाता है इसी प्रकार नास्तिक, निन्दक को भी दान नहीं देना चाहिये। व्यापारी ब्राह्मण को दान देने से न तो इस लोक में फल मिलता है और न पर लोक में ही फल प्राप्त होता है। दूसरे के गिरवी रक्खे हुये माल को पचाने वाले, वेद की निन्दा करने वाले को भी दान देने से भी दान का फल नष्ट हो जाता है। व्यापारी कारीगर, धर्महीन एव ऐसे लोग जो दूसरों की अच्छी वस्तु खरीदते समय निन्दा करते हों तथा अपनी खराब वस्तु बेचते समय तारीफ करें इनको भी दान देने से यही फल होता है। इसी प्रकार झूँठ बोलने वाला वणिक व्यवसायी ब्राह्मण भी श्राद्ध के योग्य नहीं होता है। विधवा स्त्री के द्वारा उत्पन्न पुत्र को भी दिया गया दान राख में दी गई आहुति के समान निष्फल है। काना व्यक्ति साठ, नपुसंक नौ, श्वेत कुष्ट असित जितने भी कर्मों के फल को देखता है, तथा पाप से हुआ रोगी एक हजार दाता के सत्कर्मों के फलों को नष्ट कर देता है। मूर्ख व्यक्ति को दान देने से शुभफलों की प्राप्ति नहीं हो पाती। जो मनुष्य सिर को बांध कर भोजन करता है या दक्षिण दिशा की ओर मुँह करके भोजन करता है या जो जूता पहन कर भोजन करता है जो तिरस्कार पूर्वक दान करता है उसके समस्त कर्मों के फल को भगवान ब्रह्मा असुरों के लिये दे देते हैं। श्राद्ध समाप्त होने पर उसको श्वान और यातुधान कदापि न देखें इसके लिए चारों ओर से परदा लगा देना चाहिये। और उसके चारों ओर तिल बिखेर देने चाहिए राक्षसों को निवारित

करने के लिए तिल तथा कुत्तों को निवारित करने के लिए परदा आदि की ओट करना कहा गया है। शूकर के देख लेने मात्र से ही श्राद्ध का फल नष्ट हो जाता है। मुरगा अपने पंख फड़ फड़ाने से ही उसे नष्ट कर देता है। रजस्वला स्त्री के स्पर्श से और क्रोध पूर्वक दान देने से श्राद्ध का फल समाप्त हो जाता है। जो व्यक्ति अपने द्वारा किये जाने वाले श्राद्ध या हवन आदि कार्यों को किसी दूसरे के द्वारा पूरा कराता है उसके उस कार्य से पितरगण तथा देवगण तृप्त नहीं होते हैं, तथा उसको स्वर्ग प्राप्त नहीं होता है मनोहर नदियों के तथा सरोवरों और छोटी छोटी नदियों के किनारे श्राद्ध करने से पितरगण तृप्त नहीं होते हैं। श्राद्ध करने के समय रोना नहीं चाहिए तथा किसी दूसरे से बातचीत भी अधिक नहीं करनी चाहिये। मनुष्य को भोजन करते हुये श्राद्ध नहीं करना चाहिये। एक दूसरे के प्रति द्वेषभाव तथा कपट भी प्रकट नहीं करना चाहिये मनुष्य को अपलव्य होकर हाथ में कुशा लेकर अपने जीवन पर्यन्त तक पितरों का श्राद्ध कर्म विधिपूर्वक करना चाहिये। इस प्रकार श्राद्ध कार्य करने वाले मनुष्यों से उनके पितरगण सन्तुष्ट होते हैं। श्राद्ध कर्म में सबसे पहले ब्राह्मणों की आज्ञा पाकर अग्नि में आहुति करनी चाहिये, तथा पितरों के हेतु दिये जाने वाली वस्तुओं को पृथ्वी सूप तथा, कुश के आसन पर रखनी चाहिये। विद्वान पुरुष को मास के शुक्ल पक्ष में दिन के प्रथमार्ध में श्राद्ध करना चाहिये, और कृष्णपक्ष के उत्तरार्द्ध में करने चाहिये। देश और काल के देखने वाले महान तेजस्वी, महान योगी और महात्मा पितरों की हमेशा पूजा करनी चाहिये। जल से प्रथम आचमन कराकर तथा उनके चरण धोकर बिठलाना चाहिये। उन्हें आदर सत्कार के साथ स्वच्छ आसनों पर। अच्छे २ भोजन पकवान जो पितरों की तृप्ति हेतु बनाये हों, श्रद्धा और आदर के साथ भोजन कराना चाहिये। भोजन में जब तक वह पूर्ण तृप्त न हो जांय परोसते जाना चाहिये।

जो मनुष्य पितरों में श्रद्धा रखते हैं उनको सभी सिद्धियां शीघ्र ही प्राप्त होती हैं। पितरों में श्रद्धा रखने वाले मनुष्य अपने सभी शुभ-कर्मों के बन्धनों से छूटकर मोक्ष प्राप्त करते हैं।

कश्यप ऋषि ने सारे संसार को मोहित करके यज्ञ के लिए जिस परम गोपनीय योग का उद्धार करके गुफा में सुरक्षित रक्खा था, हे योग परायण। उस अमरपद को प्राप्त करने वाला परम गोपनीय चिरन्तन और परम योग धर्म को सनत्कुमार कहा है उस परम गोपनीय फल को पितरों में भक्ति रखने वाला मनुष्य प्राप्त करता है। जो मनुष्य पितरों में भक्ति रखते हैं उन्हें योग प्राप्त होता है। मैंने आपसे श्राद्ध में किन किन वस्तुओं को दान करना चाहिये, तथा किस वस्तु के दान करने से अधिक फल प्राप्त होता है, जिन जिन तीर्थों में श्राद्ध करने का जो फल होता है इन सबका वर्णन किया है।

बृहस्पति बोले—जो मनुष्य श्राद्ध कर्म के विधान को सुनकर पितरों को दोष दृष्टि से देखकर उनमें श्रद्धा नहीं रखते हैं वे मनुष्य नास्तिक होकर घोर नरक को प्राप्त करते हैं। जो मनुष्य मन को रखकर श्राद्ध कर्म करते हैं उनके कठिन रोगों का नाश होता है। जो मनुष्य अपने मनमाने ढग से जीवन निर्वाह करने वाले हैं वे मनुष्य कुम्भीपाक नरक में जाते हैं वे जिव्हा के छेदन और चौर्य कर्म को प्राप्त होते हैं। जो मनुष्य योग से द्वेष भाव रखते हैं वे मनुष्य समुद्र में ढेला बन कर इस पृथ्वी पर जब तक ये स्थित हैं निवास करते हैं। इसलिये श्राद्ध के जो जो नियम बतलाये हैं उन्हीं के अनुसार श्राद्ध कर्म को सम्पन्न करना चाहिये। विशेष रूप से योगियों की बुराई नहीं करनी चाहिये योगियों की बुराई करने पर मनुष्य को शीघ्र ही कृमि रूप में जन्म धारण करना पड़ता है। जो मनुष्य ध्यान परायण योगियों के अन्यतम लक्ष्य मोक्ष के मुख्य साधन की जो निन्दा करते हैं, वह घोर नरक को प्राप्त होते हैं तथा इसकी बुराई सुनने वाले भी घोर नरक को प्राप्त होते हैं। योग परायण

योगेश्वरों की निन्दा करने से मनुष्य चारों तरफ के घने अन्धकार से घिरकर परम घोर नरक में जाते हैं। जो मनुष्य आत्मा को वश में रख कर योगश्वरों की बुराई सुनते हैं वह चिरकाल तक घोर कुम्भी पाक नरक में निवास करते हैं। मनुष्य को योगियों के प्रति मन वचन और कर्म से द्वेष भावना नहीं रखनी चाहिये, इस शुभ कर्म का फल मनुष्य को उसके दूसरे जन्म में प्राप्त होता है और इस जन्म में भी वह सुख प्राप्त करता है। योग मार्ग ज्ञाता आत्मा के पाट को प्राप्त नही करते हैं, वे मनुष्य अपने कर्म के अनुसार तीनों लोकों में भ्रमण करते रहते हैं। ऋग्वेद, सामवेद और यजुर्वेद तथा वेदों के समस्त अङ्गों के ज्ञाता सभी प्रकार के विकारों को छोड़कर सुख प्राप्त करते हैं। सभी प्रकार के विकारों से पार पाने वाले प्रकृति के पाटगामी, सत्व, रज, तम इन तीनों गुणों के पाटगामी वास्तव में तीनों गुणों के पारगामी होते हैं। जो योगी योग मार्ग और चौवीस तत्वों को जानने वाले हैं वे ही असली रूप में इस जन्म मरण रूप संसृति सम्बन्ध के पारगामी हैं। जिस प्रकार योगी निखिल योग तत्व को अपने योग वल से विसर्जित करता है उसी प्रकार सदो अपना विकास भी संघटित करता है, इस प्रकार योग के तत्वों को भली-प्रकार जानने वाला योगी, सबसे परे जिसकी गति है, ऐसे परम पुरुष के गोचर होता है अतः योगी मनुष्य योग को ही सहारा लेकर अपने शरीर का त्याग करते हैं। और आत्म आरुप्य प्राप्त करते हैं। योग के तत्व को जानने वाला पुरुष वेदों का सम्यक अध्ययन करके वेदों को जानने वाले उस परम पुरुष को प्राप्त करता है, उसे ही वास्तव में वेदों का तत्ववेत्ता और वेदों का परगामी कहा जाता है। जो मनुष्य वेदों के चरम प्रतिपाद्य उस परम पुरुष को अच्छी तरह से जानता है, वही वास्तव में वेदों के तत्वों को जानने वाला है, दूसरे सब वेद चिन्तक हैं। जो मनुष्य पितरों को श्रद्धा भाव से देखते हैं उनको सभी प्रकार सुख प्राप्त होते हैं। जो मनुष्य इस श्राद्ध कल्प का नियम पूर्वक श्रद्धा सहित नित्य पाठ करता अथवा सुनता है

वह पहले कहे हुये सभी तीर्थों में दिये गये दानों का फल प्राप्त करते हैं। वह श्रेष्ठात्मा मनुष्य पंक्ति पावन तथा ब्राह्मणों के समाज में भोजन करता है। जो मनुष्य इस श्राद्ध कर्म के महात्म्य को क्रोध-रहित होकर नित्य श्रद्धा भाव से सुनता है वह स्वर्ग को प्राप्त करता है इस लोक में इसके करने से परम सुखप्राप्त होता है। इसका अनुष्ठान प्रयत्न पूर्वक करना चाहिये। जो व्यक्ति पर्व सन्धियों में आलस्य को त्याग कर इस श्राद्ध विधि का पाठ करता है वह परम तेजस्वी पुत्रवान मनुष्य होता है। उसको देवताओं के समान पवित्र लोक प्राप्त होता है। भगवान प्रजापति ब्रह्माजी की पुनीत श्राद्ध विधि को हम प्रणाम करते हैं। महान योगेश्वरों को हम सदा प्रणाम करते हैं। हे तात! ये पितरगण देवताओं के भी देवता हैं, ये नाशहीन पितरगण इन सात स्थानों में नित्य निवास करते हैं। ये सब परम महात्मा प्रजापति के पुत्र हैं, इनका सबसे प्रथम गण योगियों का है, ये नित्य योगवर्धन के नाम से प्रसिद्ध हैं। दूसरा गण देवताओं का, तीसरा गण देवताओं के शत्रुओं का और अन्य गण वणियों के हैं। इन सब लोकों में स्थित रह कर देवगण इन सबकी पूजा करते हैं। चारों आश्रम में रहने वाले क्रम से इनकी पूजा करते हैं। चारों वर्णों के लोग भी इनकी पूजा क्रम से करते हैं। जो मनुष्य भक्ति पूर्वक इन पितरों की पूजा करते हैं, उनकी पितरगण स्वयं पूजा करते हैं। पुष्टि और पूजा करने वाले मनुष्य को ये पितरगण सभी प्रकार से पुष्टि, स्वर्ग और प्रजाएँ प्रदान करते हैं। पुत्र की इच्छा करने वाले को देवपूजा से पितरों की पूजा का फल अधिक श्रेष्ठ कहा गया है। देवों से पहले पितरों को सन्तुष्ट करना चाहिये। सभी देवता और पितरों के लिये चांदी का बर्तन बतलाया है यदि चांदी का बर्तन न हो सके तो चांदी से मढ़ा हुआ होना चाहिये, श्राद्ध कर्म में ऐसे बर्तनों का अधिक महान बतलाया है। जिनके परिवार के मनुष्य नाम और गोत्र को उच्चारण करके विधि पूर्वक अपसव्य होकर पृथ्वी पर कुशा बिछाकर तीन पिण्ड दान करते हैं, उनके वे तीनों पिण्ड सभी

स्थानों में वर्तमान रहने वाले पितरों को तृप्त करते हैं। मनुष्य जो भोजन करता है, उसी भोजन से पितरों का श्राद्ध करना चाहिये। जिस प्रकार सैकड़ों गायों के बीच में भी बछड़ा अपनी के पास पहुँच जाता है, उसी प्रकार श्राद्ध कर्म में दियेगये पदार्थों को मन्त्र वहां पर पहुंचा देता है। जिस स्थान पर जीवस्थित रहता है। पितरों के नाम गोत्र और मन्त्र श्राद्ध में दिये गये अन्न को उसके पास ले जाते हैं, श्राद्ध के अन्न से उनकी तृप्ति होती है। प्रजापति ब्रह्माजी ने श्राद्ध की विधि इसी प्रकार स्थित की है। अक्षयफल के प्राप्त करने की इच्छा रखने वाले मनुष्यों के लिये पितरों की यह आदि सृष्टि हुई है। ये पितरगण ही देवस्वरूप हैं और देवगण ही पितर स्वरूप हैं। ये ऋषिगण उन पितरों के यजमान हैं, सम्पूर्ण लोक उनकी पुत्री नाती और पुत्र के रूप में है। श्राद्ध कर्म में पवित्रता, दान, तीर्थ, फल, अक्षय फल प्राप्त करना, द्विजगण इत्यादि सभी आवश्यक विधि का वर्णन मैंने आपसे किया है।

वृहस्पति बोले—प्राचीनकाल में ऋषियों के पूछने पर ऋषि अंगिरा जी ने पितरों के विषय में बात चीत की थी। पूर्व समय में हजारों वर्ष में पूरा होने वाला एक महायज्ञ सम्पन्न हुआ था, जिसमें प्रजापति ब्रह्माजी को गृह पति बनाया गया और प्रजापति ब्रह्माजी ने पांच सौ वर्षों तक देवताओं पर प्रभुत्व स्थापित किया। ब्रह्मवेत्ता गण इस विषय में एक श्लोक का अर्थ इस प्रकार लिखते हैं—उस महान यज्ञ में परमात्मा भगवान ब्रह्मा के दीक्षित होने पर उन्हीं से सभी लोकों के हित के लिये, अक्षय लाभ के प्रार्थी पितरों का श्रेष्ठ जन्म वहीं पर सम्पन्न हुआ।

सूतजी ने कहा—वृहस्पति ने अपने विद्वान पुत्र के पूछने पर इस प्रकार पितरों के वंश का हाल सुनाया था, वही हाल मैंने आप लोगों को सुनाया, इसके बाद अब मैं आपको वरुणदेव के वंश का वर्णन सुनाऊंगा।

[श्री वायु महापुराण का श्राद्ध कल्प नाम का तिरासीवां अध्याय समाप्त]

चौरासीवाँ अध्याय

[श्राद्ध विधि के विषय में वरुण वंश का वर्णन]

ऋषिगण बोले—सूत के इस प्रकार कहने पर महर्षि ऋषिगणों ने उनसे इस प्रकार कहा कि तेजस्वी राजाओं के वंशों का वर्णन, उनकी स्थिति और उनके प्रभाव को आप हमें सुनाइये। लोम हर्षण सूतजी! समस्त श्रोताओं के उत्तर देने वाले परम प्रवीण कुशल वक्ता सूत जी पुनः इस प्रकार बोले—

सूतजी बोले—हे ऋषिगण! जिस प्रकार इस विषय में जो कुछ ऋषि ने मुझे सुनाया है, उसी को मैं भी सुना रहा हूँ आप सब ध्यान पूर्वक सुनिये। वरुणदेव की पत्नि सामुद्री शुना देवी के नाम से प्रसिद्ध थी, उनके कलि और वैद्य नाम के दो पुत्र हुये। एक सुर सुन्दरी नाम की कन्या भी पैदा हुई। कलि के दो महाबलवान जय और विजय नाम के पुत्र पैदा हुये। वैद्य के घृणि और मुनि नाम के दो महान बलवान पुत्र पैदा हुये। प्रजाओं के भक्षण करने को उद्यत वे दोनों एक दूसरे को खाने के लिये तैयार हो गये और एक दूसरे को भक्षण करके नाश को प्राप्त हुये। शुना के गर्भ से कलि पैदा हुये, उसके पुत्र का नाम मद कहा जाता है। त्वष्टा की कन्या हिंसा कलि की स्त्री थी, जो सबसे बड़ी स्त्री थी, उसका नाम निकृति था। उसने कलि के संयोग से चार मनुष्य भक्षी पुत्रों को पैदा किया, उन पुत्रों के नाम इस प्रकार हैं–नाक, विघ्न, सद्रम और विधम नाम थे। विघ्न नाम के पुत्र के शिर नहीं था, नाक नाम का पुत्र अशरीरी था, सद्रम नाम के पुत्र के एक हाथ था, विधम नाम के पुत्र के केवल एक पैर था। सद्रम की तमोगुणी पूतना नाम की स्त्री थी, विधम के रेवती नाम की स्त्री थी, इन दोनों के हजार पुत्र पैदा हुये। नाक की स्त्री का नाम शकुनि थी विघ्न की स्त्री का नाम अयोमुखी था; इनके भीषण बड़े बड़े आकृति के शिर वाले राक्षस पैदा हुये, ये राक्षस दोनों सन्ध्याओं में घूमा करते हैं। रेवती और पूतना के पुत्र नैऋत नाम से प्रसिद्ध हुये। ये सभी राक्षस ग्रह रूप में लोगों

को तथा बालकों को दुख पहुँचाते थे। ब्रह्मा जी ने इन सबों के स्वामी स्कन्द स्वामिकार्तिकेय को बनाया। वृहस्पति जी की परम सुन्दरी योगसिद्धा नाम की बहिन थी, वह आठवें बसु प्रभास की स्त्री थी, इनके शिल्पीयों के स्वामी विश्वकर्मा नाम के पुत्र पैदा हुये। उदर बुद्धि वाले बहुत सुन्दर शरीर वाले विश्वकर्मा धर्म के पौत्र थे। देवताओं के हजारों शिल्प कर्मों के करने वाले वास्तु विज्ञान के वेत्ता थे। उन्होने सभी देवताओं के विमानों को बनाया था। उन्हीं विश्वकर्मा द्वारा प्रचालित शिल्प कर्म के आश्रय से मनुष्य आज भी अपनी जीविका चलाते हैं। विश्वकर्मा के बिरोचना नाम की स्त्री थी, जो प्रह्लादी के नाम से भी प्रसिद्ध हुई, वे विरोचन की बहिन थी और त्रिशिरा की माता थीं। शिल्य कर्म में चतुर विश्वकर्मा के मय नाम का पुत्र तथा सुरेणु नाम की कन्या थी। मय नाम का पुत्र भी शिल्यकारीगरी में बहुत चतुर था। इसी कारण मय भी विश्वकर्मा नाम से प्रसिद्ध हुआ। विश्वकर्मा की पुत्री सुरेणु, संज्ञा नाम से सूर्य की पत्नि हुई, उसने अपने तपोबल से सूर्य के सबसे बड़े पुत्र मनु को पैदा किया। इसके बाद उसने दो जुड़वां यम और यमुना नाम के पुत्र पुत्री को जन्म दिया। फिर संज्ञा नामकी स्त्री ने कुरु देश में जाकर घोड़ी का रूप धारण कर लिया, और अश्व रूप धारण करने वाले सूर्य के संयोग से आकाश में अपनी नासिका के दोनों छिद्रों से वासत्य और दस्त्र नाम के दो पुत्रों को पैदा किया, वे दोनों मार्तण्ड नाम से पुकारे जाते हैं।

ऋषियों ने कहा—हे सूत जी! विद्वान लोग सूर्य को मार्तण्ड क्यों कहते हैं, किस कारण से संज्ञा ने घोड़ी का रूप धारण किया, और किस तरह अपने नाक के छिद्र से पुत्रों को उत्पन्न किया, आप हम लोगों को यह बात बिस्तार पूर्वक बतलाइये।

सूतजी बोले—प्राचीनकाल में सूर्यदेव एक अण्डे के रूप में पैदा हुये थे, बहुत दिनों तक जब वह अण्डा नहीं फूटा तब उसे विश्वकर्मा ने फोड़ दिया। उस अण्डे को फोड़ते देखकर गर्भ हत्या के

भय से डर कर कश्यप जी बहुत दुखी हुए, अन्डे को दो भागों में फूटा देखकर विश्वकर्मा से बोले 'यह साधारण अन्डा नहीं है, फिर उस अन्डस्थ जीव से बोले। हे निष्पाप ! इस मरे हुए अन्डे से तुम पुनः उत्पन्न हो। निश्चय ही यह अन्डस्थ प्राणी मरा नहीं है। स्नेह पूर्वक पिता ने इतनी बातें कहीं, पिता ने अन्डे को दो भागों में बांटकर, कहा कि मार्तन्ड हो जाओ, उसी के आधार पर पुराणों में सूर्य को मार्तन्ड कहते हैं। इसके बाद अब मैं आपको मृत अन्डे से उत्पन्न सतानों का वर्णन करूँगा। बहुत दिन पीछे सूर्य के संज्ञा नाम पत्नि से तीन पुत्र उत्पन्न हुए थे। संज्ञा में दोनों अश्विनीकुमार और उनसे छोटे वावर्णि नाम के मनु पुत्र रूप में उत्पन्न हुए इसके बाद शनैश्वर जी पैदा हुए। ये सात मार्तन्ड कहे जाते हैं। महान यशस्वी विवस्वान दाक्षायणी में महर्षि कश्यप के संयोग से उत्पन्न हुए थे। उनकी पत्नि विश्वकर्मा की पुत्री महादेवी सुरेणु थी, जो संज्ञा नाम से प्रसिद्ध थीं। भगवान मार्तन्ड की पत्नि, परम रूपवती और यौवनवती सुरेणुदेवी की सन्तुष्टि पतिरूप में उनसे नहीं होती थी। वे देदीप्यमान सूर्य के तेज को सहन नहं कर पाती थीं, अतः वे बहुत सुन्दर नहीं लगते थे। इसलिएकश्यप ने ठीक कहा था कि 'अन्डे में स्थित ये मरे नही हैं।' अतः उससे उत्पन्न होने के कारण वे मार्तण्ड कहे जाते हैं। कश्यप नन्दन मार्तण्ड ने तीनों लोकों को खूब तपाया। उनके तीन संतानें हुईं। उनमें दो महातेजस्वी पुत्र श्राद्ध देव प्रजापति मनु और छोटे यमराज थे एक कन्या कालिन्दी नाम वाली थी। ये उनकी सज्ञा नामकपुत्रीमें उत्पन्न हुए थे यम यमी दोनों जुड़वां थे उनका तेज इतना अधिक था कि माता सज्ञा अपने में सहन न कर सकी तब उन्होंने अपनी जैसी सुन्दर मिट्टी की प्रतिमा बनाई वह हाथ जोड़ संज्ञा के सामने आकर बोली–बतलाइये मैं क्या करूँ ?' संज्ञा ने उससे कहा–हे कल्याणी ! मैं अपने पिता के यहां जा रही हूँ तू निःशक होकर इस घर में रह और इन मेरे दो बालकों की देखभाल करना। इस भेद हमारे तेजस्वी पतिदेव से नहीं कहना मिट्टी की बनी संज्ञा ने कहा कि मैं शिर के बाल पकड़े जाने तक तो यह भेद किसी से नहीं कहूंगी। इसके बाद संज्ञा अपने पिता विश्वकर्मा के घर लज्जा

पूर्वक पहुँची। संज्ञा को देखकर पिता ने क्रोध पूर्वक कहा--तुम अभी अपने पति के पास चली जाओ, दिवाकर के प्रति किसी प्रकार घृणा की भावना अपने अन्दर मत रखो। बार बार कहने पर भी वह आग्रह करके हजारों वर्ष तक अपने पिता के घर में रही आई। पिता के द्वारा अधिक यह कहने पर कि 'तुम अपने पति के घर जाओ'-उस चरित्र शालिनी ने अपना रूप छिपा कर 'वडवा' का रूप बनाया और पिता के घर से निकल आई। उत्तर कुरु में जाकर वह तृणों को खाकर रहने लगी।

इधर नकली संज्ञा में सूर्य ने दो पुत्रों को और जन्म दिया। इन पुत्रों के नाम श्रुतश्रवा और श्रुतकर्मा थे। श्रुतश्रवा ने बाद में सावर्ण नामक मनु बने और श्रुतकर्मा को शनिश्चर नामक ग्रह जानना चाहिये। वह भी बाद में सावर्ण नामक मनु कहलाएगा। उस नकली मिट्टी की संज्ञा का प्रेम अपने पुत्रों में अधिक रहने लगा। तथा असली की संतानों में कम होगया। यह यमराज को बिलकुल सहन नहीं हुआ। सपत्नी डाह के कारण जब अपमान सहन नहीं हुआ तो क्रोध में आकर यमराज ने एक दिन पैर की ठोकर मारी। उसने इससे लज्जित होकर यमराज को शाप दे दिया कि अपने पिता की पत्नि को इस प्रकार पैर से ठोकर मारने के कारण तेरा यह पैर गिर पड़ेगा। इससे यमराज अधिक दुखी हुए और पिता को जाकर सब बातें बतलाईं। और कहा कि हे तात! माता के साथ यह दुर्व्यवहार हमने अज्ञानवश किया है परन्तु फिर भी आप इस भीषण शाप से हमारी रक्षा करो। यमराज के कहने पर सूर्यदेव बोले-इस घटना में अवश्य कोई रहस्य है नहीं तो तुम्हारे जैसे धर्मात्मा पुत्र के मन में क्रोध का संचार हो ही नहीं सकता था। किन्तु तुम्हारी माता के शाप को निष्फल मैं नहीं कर सकता। तुम्हारे मांस को लेकर जब कृमि (कीड़े) भूतल पर चलेंगे तब तुम्हारा पैर बिना अभ्यास के पुनः प्राप्त होगा। इससे माता का शाप और तुम्हारे पैर की हानि न होना दोनों समाधान हो सकेंगे।' इसके बाद आदित्य ने संज्ञा से कहा कि तुम अपने सभी पुत्रों के समान होने पर भेद की भावना क्यों करती हो? संज्ञा ने अपने गुप्त भेद को छिपाने

के कारण कोई उत्तर नहीं दिया। परन्तु परम तेजस्वी सूर्य ने योग बल से सब रहस्य जानकर संज्ञा को नष्ट करने के लिए शाप दिया, तब संज्ञा ने डरते हुए सूर्य भगवान से अपना सारा रहस्य बता दिया, संज्ञा के इस प्रकार कहने पर सूर्य देव बहुत क्रोधित हुए और उसी अवस्था में विश्वकर्मा के पास गये। इनके पहुँचने पर विश्वकर्मा ने इनका खूब आदर सत्कार करके इनके क्रोध को शान्त किया और सूर्यदेव से कहा कि तुम्हारा यह तेजोमयी शरीर शोभा नहीं देता इस तेजोमय रूप को संज्ञा सहन न कर पाती थी, वह अब कुरु देश के मैदान में घास चर रही है। आप अपनी उस पवित्र, शुभ मार्ग गामिनी, योवनपूर्ण उस परम तेजस्विनी पत्नि संज्ञा को आज देखेंगे, लेकिन शर्त यह है कि आज हमारा आतिथ्य स्वीकार करें, जैसा हम कहें वैसा ही आप करें। आपके इस तेजोमय स्वरूप को हम बदलना चाहते हैं, इस समय आपका तेजोमय रूप तिरछा, ऊँचा, और नीचा था, उनकी किरणें ऊँची, नीची, तिरछे सभी स्थानों में पड़ती थीं। अपने इस रूप को सुनकर सूर्यदेव बहुत शरमिन्दा हुए। अपने प्रसिद्ध चक्र से विश्वकर्मा ने सूर्यदेव के तेजोमय रूप शान पर रख कर खराद किया, तब उस चक्र से खराद देने के बाद सूर्य का शेष तेज बहुत सुन्दर दिखाई देने लगा। सूर्य भगवान जो पहले सुन्दर नहीं लगते थे अब वे बहुत ही अधिक सुन्दर दिखाई देते थे। इसके बाद सूर्य ने अपने योगबल से उस बड़वा रूप रखने वाली अपनी स्त्री संज्ञा को देखा। उस समय वह अपने तेज और नियमों के कारण सबसे अलग थी। उसे देखकर सूर्य देव ने अपना अश्व का रूप धारण करके मुख की तरफ से काम भावना प्रकट करने लगे। काम चेष्टा करने पर संज्ञा ने पराये पुरुष के भय से सूर्य देव के वीर्य को अपनी नासिका के दोनों छिद्रों से बाहर पृथ्वी पर गिरा दिया, उस बाहर गिरे हुए सूर्य के वीर्य से दोनों अश्विनी कुमार जो परम वैद्य कहलाते थे पैदा हुए, वे दोनों सभी गुणों से सम्पन्न थे। ये दोनों अश्विनी कुमार नात्यत्य और दस्त्र के नाम से प्रसिद्ध हैं। ये

दोनों आठवें प्रजापति मार्तण्ड के पुत्र कहलाते हैं। इसके सूर्यदेव ने अपने सुन्दर रूप को संज्ञा को दिखाया, संज्ञा ने अपने पति के इस रूप को देखा और बहुत प्रसन्न हुई ! इसके उस छाया रूपी संज्ञा के शाप से यमराज बहुत दुखी थे, लेकिन उन्होंने अपने शुभ धर्माचरणों से सभी को परम प्रसन्न किया, इसी कारण उनका नाम धर्मराज पड़ा है। यम ने अपने शुभ कर्मों के कारण बहुत सुन्दर रूप तेज और कान्ति प्राप्त की, तथा सभी पितरों राज्य तथा लोकपाल की पदवी भी उन्हीं को मिली। यशस्वी सावर्णि मनु इस प्रकार सावर्णि मन्वन्तर में प्रजापति के रूप में स्थित होंगे। वे भगवान आज भी सुरम्यनु-सुमेरु पर्वत के निचले भाग में तपस्या में निरत हैं। उसी स्थान पर उनके भाई शनैश्चर जी ग्रह रूप में स्थित हुए। विश्वकर्मा ने सूर्यदेव के खराद हुए तेजोमय रूप से भगवान विष्णु के सुदर्शन चक्र को बनाया। इन दोनों की छोटी बहिन यमुना के नाम से प्रसिद्ध हैं। ये यमुना सभी लोकों को पवित्र करने वाली सभी नदियों में पवित्र यमुनाजी के रूप में बदल गईं। सूर्य के सबसे बड़े पुत्र का नाम मनु था, उन मनु राजा का वंश आज तक इस पृथ्वी पर स्थित है। जो मनुष्य सूर्य के इन सातों पुत्रों के जन्म के विषय में सुनता है उसके सभी दुख दूर होकर उसे महान यश प्राप्त होता है।

[श्री वायु महापुराण का श्राद्ध के विषय में वरुण वंश का वर्णन नाम को चौरासीवां अध्याय समाप्त]

पिच्यासीवाँ अध्याय

(श्राद्ध के विषय में वैवस्वत मनु के वंश का वर्णन)

सूतजी बोले—हे द्विजगण ! चाक्षुष मन्वन्तर के समाप्त होने पर सभी देवगण भी समाप्त हो गए, तब सूर्य के पुत्र महान प्रतिभाशाली मनु समस्त पृथ्वी के राजा हुए, हम आपको उन्हीं मनु के विषय में विस्तार पूर्वक सुना रहे हैं। मैं सबसे पहले वैवस्वत मनु के वंश का वर्णन कर रहा हूँ। सबसे बड़े मनु उन्हीं के समान तेजशाली नव पुत्र हुए। इन नव पुत्रों के नाम इस प्रकार हैं। इक्ष्वाकु, नहुष, धृष्ट,

शर्याति, नरिष्यन्त, प्रांशु, करुष और पृषध्र थे । ये सभी पुत्र नव मनु के पुत्रों के नाम से पुकारे जाते हैं। प्राचीनकाल में ब्रह्मा जी की आज्ञा पाकर मनु ने सृष्टि कार्य शुरू किया, पर वह सृष्टि कार्य बेकार रहे। इसके बाद प्रजापति मनु ने पुत्र की इच्छा से पुत्रेष्ठि यज्ञ का अनुष्ठान किया और मित्रावरुण के लिए अग्नि में आहुति डाली, तब उस यज्ञ भूमि से सुन्दर वस्त्रों को धारण किए, दिव्य आभूषणों से सजे हुए अङ्गों वाली इड़ा नाम की स्त्री निकली दण्डधारी राजा मनु ने उसे इला कह कर पुकारा। तब पुत्र की अभिलाषा रखने वाले राजा मनु से इला ने कहा कि हे राजन् ! मैं आपकी आज्ञाकारिणी हूँ आपका कल्याण हो, हे श्रेष्ठ राजा ! मैं मित्रावरुण के अंश से पैदा हुई हूं अतः मैं उन्हीं के पास जाती हूं, जिससे न तो हमारा धर्म ही नष्ट होगा और न ही हमारा नाश ही होगा । इस प्रकार कह कर सुन्दर इड़ा मित्रावरुण के पास चली गई और वहां जाकर दोनों से हाथ जोड़कर बोली, हे युगलदेव ! आप दोनों के अंश से ही मेरा जन्म हुआ है, अतः आप मेरे लिये आज्ञा दीजिए, मैं आपकी क्या भलाई करूँ राजा मनु ने मुझसे कहाथा कि तुम मेरी अनुगामिनी बनो इसमें आप लोगों की क्या इच्छा है? उस सुन्दर पवित्रवती इला के इस प्रकार कहने पर दोनों देवगणों ने उससे कहा कि हम तुम पर बहुत प्रसन्न हैं , तुम हमारी कन्या के रूप में प्रतिष्ठित होंगी फिर तीनों लोकों में पूजित, संसार के प्रिय धर्मशील मनु के वंश के विस्तार करने वाले सुद्युम्न के रूप में पैदा होंगे वे सुद्युम्न फिर स्त्री के रूप में बदल जायेंगे। इला इस प्रकार वरदान प्राप्त करके फिर अपने पिता के पास आयी। चन्द्रमा के पुत्र बुध ने उचित अवसर देखकर उससे काम इच्छा प्रकट की तब बुध के संयोग से इला के पुरुरवा नाम का पुत्र पैदा हुआ। इसके बाद बुध के संयोग से पुरुरवा को जन्म देकर वह फिर सुद्युम्न के रूप में बदल गई। सुद्युम्न के तीन धार्मिक पुत्र पैदा हुए जिनके नाम इस प्रकार हैं–उत्कल, गय और तीसरे का नाम विनताश्व थे उत्कल के नाम पर उसके राज्यका नाम उत्कल

प्रदेश हुआ, विनताश्व का राज्य पश्चिमी प्रदेश था तथा तीसरे गय ने गया नाम की पुरी को बसाया था। सूर्य के पुत्र मनु ने सृष्टि का विस्तार करके इस पृथ्वी को दस भागों में बांट दिया। इक्ष्वाकु के दस और पुत्र पैदा हुए, जो सभी राज्य के उत्तराधिकारी हुए। सुद्युम्न कन्या होने के कारण से राज्य को प्राप्त न कर सके। तब वशिष्ठ की आज्ञा से सुद्युम्न प्रतिष्ठान के उत्तराधिकारी हुए। लेकिन यशस्वी मनु के पुत्र सुद्युम्न राज्य प्राप्त करके फिर स्त्री रूप में होगये, तब उनके राज्य के स्वामी पुरुरवा हुए। मनुष्य में स्त्री पुरुषों के चिन्ह की सहज ही जानकारी रहती है। ऋषियों ने सूत जी की इस प्रकार बातें सुनकर उनसे पूँछा कि मनु के पुत्र सुद्युम्न पुरुष होकर स्त्री के रूप में किस प्रकार बदल गये।

सूत जी बोले—प्राचीनकाल की बात है कि एक बार पार्वती ने महादेव जी से इस प्रकार कहा कि हे भगवान शङ्कर जी! जो कोई पुरुष मनुष्य मेरे इस आश्रय में आयेगा, वह शीघ्र ही अप्सराओं के समान सुन्दर स्त्री के रूप में बदल जायगा। पार्वती जी के इस प्रकार वचन सुनकर उस आश्रम के रहने वाले भूत, पिशाच, पक्षी, पशु आदि जीव जन्तु सब स्त्री के रूप में बदल कर राजा इन्द्र के साथअप्सराओं के समान क्रीड़ा करने लगे। शिकार खेलते हुये राजा सुद्युम्न उस वन में घुस गए, जहां पिशाचों और भूतों के साथ रुद्र भगवान स्त्री रूप में विराजमान थे। इसी कारण से राजा सुद्युम्न को पुनः स्त्री रूप को प्राप्त हुये, और फिर उन्होंने महादेव जी की कृपा से गणों का राज्य प्राप्त किया।

(इति श्री वायु महापुराण का श्राद्ध के प्रसंग में वैवस्वत मनु के वंश का वर्णन नामका पिच्यासीवां अध्याय समाप्त)

छियासीवाँ अध्याय

(वैवस्वत मनु के वंश के विषय में गंधर्वों की मूर्च्छना का कारण)

सूत जी बोले अब आप मनु के पुत्रों का विस्तार पूर्वक वर्णन सुनिये। मनु के पुत्र पृष्षध्र ने अपने गुरु महात्मा च्यवन ऋषि की गाय को चुराकर